भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी-लेनिनवादी)
की केन्द्रीय कमेटी का मुखपत्र

प्रतिरोध का स्वर

अगस्त 2020 वर्ष 34 संख्या 7-8 मूल्य 2 रुपये

5 अगस्त को अयोध्या में भूमि पूजन फासीवादी एजेंडा का हिस्सा है

जहां देश लॉकडाउन के भिन्न दौरों से गुजर रहा है और जनता का व्यापक हिस्सा सरकार के कोरोना महामारी के प्रबंधन के कारण भयानक संकट में फंसा है, आरएसएस नेत त्व वाली केन्द्र सरकार राम मंदिर के निर्माण के लिए अयोध्या में भूमि पूजन करने के लिए आगे बढ़ी है। यह निर्णय जनता की कठिनाइयों के प्रति शासकों द्वारा पूर्ण अपमान दर्शाता है। केन्द्र व राज्य सरकार के प्रमुखों के अलावा मंच पर आरएसएस के प्रमुख भी बैठेंगे, सबको यह दिखाने के लिए यह सरकार और शासक दल आरएसएस के नियंत्रण में चलते हैं।

शासक अपनी 'जीत' का उत्सव मना रहे हैं, जो सर्वोच्च न्यायालय द्वारा बहुसंख्यक साम्प्रदायिक ताकतों द्वारा खड़े किये गये इस लगभग *7* दशक पुराने विवाद को समाप्त करने से संभव हुआ। यह कदम बहुसंख्यकवाद की प्राथमिकता का आलिंगन करता है, धर्मनिरपेक्षता को कमजोर करता है, उस हद तक भी जिस तक यह संविधान में दर्ज है और कानून के राज को धक्का पहुंचाता है। यह शासक फासीवादी ताकतों और उनके हिन्दू राष्ट्र के एजेंडा की जीत है। इसने, सरकार द्वारा किये जा रहे हमलों और लगातार 'कल्याणकारी कदमों' को घटाने के कारण, वे भी जिन्हें अब तक की शासक व्यवस्थाओं ने अमल किया है, और जो आम जनता के जीवन के हालातों को और मुश्किल कर दिया हैं, देश की जनता के सामने चुनौतियों को बढ़ा दिया है। इसने प्रगतिशील व जनवादी ताकतों के सामने भी, जो जनता के जनवादी अधिकारों पर बढ़ रहे दमन के साथ, बढ़ते हमलों का सामना कर रहे हैं, चुनौतियां बढ़ा दी हैं।

शासक आरएसएस-भाजपा धर्मनिरपेक्षता को कमजोर करने और जनता के मूल सवालों से ध्यान हटाने में अपनी सफलता का उत्सव मना रही है, जबकि जनता बढ़ते शोषण, उत्पीड़न, दमन व दबाव से कराह रही है; जो ना केवल अपनी जीविका के साधन से विमुक्त हो रही है बल्कि उसकी मांग उठाने के अधिकार से भी। उत्तर प्रदेश साम्प्रदायिक ताकतों का एक दशक से ज्यादा समय से मुख्य कार्यक्षेत्र रहा है और इन ताकतों ने *1947* से पहले औपनिवेशिक शासकों के संरक्षण में और बाद में सत्ता के हस्तांतरण के बाद जो उत्तरोत्तर सरकारें शासन में आईं, उनके सहयोग के साथ लगातार अपनी पकड़ मजबूत की है। अयोध्या का विवाद औपनिवेशिक ताकतों और अभिजात वर्ग के बीच आपसी सांठ-गांठ का इतिहास है। इस प्रक्रिया में जनता की वह संस्कृति जो एक सहस्राब्दी से अधिक समय में क्षेत्र की जनता के संयुक्त प्रयासों से विकसित हुई थी, नष्ट कर दी गयी है। यह एक समग्र संस्कृति थी, जिसे गंगा-जमुनी तहजीब कहा जाता है। इसके नष्ट किये जाने के व्यापक उद्देश्य का इस्तेमाल भारत के लोगों के वास्तविक संघर्षों को भटकाने के लिए और साम्राज्यवादियों तथा जनविरोधी अभिजात वर्ग, जिनका औपनिवेशिक शासकों ने अपने शासन के लिए अधिकाधिक इस्तेमाल किया था, की लूट के लिए देश को सुरक्षित करने के लिए भी किया गया। औपनिवेशिक शासन की पकड़ के विरुद्ध भारतीय जनता की एकताबद्ध आकांक्षाओं को भटकाने के लिए साम्प्रदायिकता मुख्य औजार रही है। भारतीय जनता की आकांक्षाओं को उखाड़ फेंकने और दमन तथा सुधार की लम्बे समय से स्वीकृत नीतियों को अमल करने के लिए सत्ता हस्तांतरण के बाद के शासन का भी यह एक प्रमुख स्तम्भ रहा है।

शासक फासीवादी ताकतों ने इस उत्सव के लिए अगस्त *5* को चुना है ताकि वे जम्मू कश्मीर के साथ भारतीय संघ के सम्बन्धों से जुड़ी धारा *370* को समाप्त करने और जम्मू कश्मीर राज्य को विघटित करने के अपने कदमों का भी जश्न मना सकें। पिछले *1* साल में जम्मू कश्मीर के लोग पूर्ण लॉकडाउन में जी रहे हैं - ना केवल आने जाने का बल्कि सूचनाओं के आदान-प्रदान का भी; सभी राजनीतिक अधिकारों का बलपूर्वक दमन किया गया और लोगों का आर्थिक जीवन पूरी तरह से भंग कर दिया गया है; यह सब राज्य में किये जा रहे जनसांख्यिकी परिवर्तन, जो शासक फासीवादी ताकतों का असली उद्देश्य है, जनता को डराकर स्वीकार कराने के लिए है। एक साल बाद भी, सरकार पूर्ण बंदी के अमल को जारी रख रही है, जो दिखाता है कि शासक अपने को कितना ही ताकतवर समझे, जनता की इच्छाओं को दबा पाना इतना आसान नहीं होता। एक

साल बाद भी वे बंदी को जारी रखे हुए हैं और यह भी नहीं कह पा रहे हैं कि वे इसे कब हटाएंगे। सच यह है कि आरएसएस-भाजपा, जो तब दो माह पूर्व सत्ता में वापस लौटी थी और उसने राज्य के सभी अंगों पर अपनी पकड़ बढ़ा ली थी, द्वारा पिछले साल *5* अगस्त को की गयी घोषणा, फासीवाद की ओर कदम बढ़ाने के लिए वर्तमान संवैधानिक ढांचे को कुचलने का उसका इरादा साबित करती है। सत्ता में लौटने के बाद से आरएसएस-भाजपा जनता के उन *5* सिद्धान्तों को, जो औपनिवेशिक शासन के दौरान भारतीय जनता के संघर्षों के दौर में व्यवथित हुए थे, यानी उपनिवेश विरोध, धर्मनिरपेक्षता, लोकतंत्र, सामाजिक न्याय और संघवाद को समाप्त करने की जल्दी में है।

जब से आरएसएस-भाजपा सत्ता में लौटी है, देश की जनता ने पिछले सौ साल से ज्यादा के संघर्षों में जो कुछ हासिल किया था, उसे समाप्त करने के कदम उठा रही है। मजदूरों के कठिनाइयों से जीते गये अधिकारों पर हमला किया जा रहा है, उन पर भी जो श्रम कानूनों में दर्ज हैं। किसान खेती और अपनी जीविका पर विदेशी पूंजी व उनके दलाल कारपोरेटों के बढ़ते हस्तक्षेप से अभूतपूर्व हमलों का सामना कर रहे हैं, और लोग अभूतपर्व बेरोजगारी का सामना कर रहे हैं, आदिवासी जमीन और जीविका के साधनों से वंचित हो रहे हैं, दलितों पर शारीरिक हमले तथा आरक्षण पर हमले हो रहे हैं और महिलाएं मनुस्म ति के नियमों के थोपे जाने के प्रयास का सामना कर रही हैं। तेज हो रहे आर्थिक व सामाजिक हमलों के खिलाफ संघर्षों के उदय को रोकने के लिए शासन तंत्र ने जनवादी अधिकारों का गला घोंट दिया है, खुद और दमनकारी कानूनों से लैस हो गया है और उसने दमन की मशीन को मजबूत कर लिया है। जो लोग जनवादी अधिकारों का समर्थन करते हैं और आर्थिक शोषण तथा सामाजिक उत्पीड़न का विरोध करते हैं, उनके खिलाफ फर्जी आरोप लगाकर कार्यवाही की जा रही है।

आरएसएस-भाजपा शासक आम लोगों से शिक्षा को और दूर ले जाने के प्रयासों में जुटे हुए हैं और वे नई पीढ़ी को गैरवैज्ञानिक व म ध्ययुगीन चिंतन से लैस करना चाहते हैं, ताकि ये विदेशी पूंजी व घरेलू प्रतिक्रियावादियों, बड़े पूंजीपति व जमींदार के शोषण के लिए सरल साधन बन सकें। वे इनमें सभी आलोचनात्मक विचारों, वैज्ञानिक चिंतन को दबा रहे हैं और उनमें आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक रूप से ताकतवर लोगों के प्रति अधीनस्थता को बढ़ावा दे रहे हैं।

आरएसएस-भाजपा ने कुटिलता के साथ कोराना महामारी का इस्तेमाल कानूनी अधिकारों को कमजोर करने और जनता पर हमले तेज करने के लिए किया है। महामारी को रोकने के लिए कदम उठाने की जगह उन्होंने, असल में उसे और बढ़ाया है; जो इस चिकित्सीय व आर्थिक आपात स्थिति से प्रभावित हैं, उन्हें राहत देने की जगह इन्होंने उन पर और हमले करने शुरु कर दिये हैं और साथ में स्वास्थ्य सुविधाओं को सुधारने और आर्थिक कमजोरी से उबरने के लिए कदम उठाने के प्रति अरूचि दिखाई है। और अब लोगों का ध्यान अपनी चौतरफा विफलता से उठाने के लिए तथा धनी व ताकतवर लोगों की सेवा के लिए, इस मौके पर उन्होंने भूमि पूजन शुरु कर दिया है। यह जनता की आंखों में धूल झोंकने का प्रयास है।

शासक दिखाना चाहते हैं कि राम मंदिर का निर्माण करके उन्होंने बहुसंख्यक समुदाय की 'आकांक्षाओं' को पूरा कर दिया है। यह शासकों का प्रयास है कि वे दिखा सकें कि कम से कम बहुसंख्यक समुदाय के गरीब लोगों को खाना, कपड़ा, आश्रय, शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं की जरूरत नहीं है। वे लोगों की पिछड़ी धारणाओं का इस्तेमाल करके उन्हें और पिछड़ेपन, गरीबी तथा दरिद्रता की ओर ढ़केल रहे हैं। यह लोगों का पिछड़ापन नहीं है, यह शासकों की उनको पिछड़ा बनाए रखने की मुहिम है। यह लोगों की धार्मिक भावनाओं या पूर्वाग्रहों का भी सवाल नहीं है, क्योंकि इन बातों ने कभी भी भारत के लोगों को आर्थिक विकास तथा सामाजिक सम द्धता के प्रयास करने से नहीं रोका है, उन्हें कभी भी बेहतर जीवन प्राप्त करने के प्रयास से नहीं रोका है। यह साम्प्रदायिकता का सवाल है जो धर्म के आधार पर शासक वर्गों की सेवा में एक राजनीतिक अहंकारवादी गोलबंदी है और जो प्रतिक्रियावादियों के शासन को जारी रखने की सेवा करती है। धर्मनिरपेक्षता दुश्मनों के खिलाफ साझे संघर्ष के लिए लोगों की आवश्यकता है, साझी आकांक्षाओं पर आधारित नवजनवादी भारत के निर्माण के लिए। धर्मनिरपेक्षता आम जन की आवश्यकता है, जिसके आधार पर वे भारत के मेहनतकश लोगों के संघर्षों का निर्माण कर सकें व उसकी आत्मनिर्भरता, दुनिया के देशों के बीच अपनी भूमिका निभा सकें।

आरएसएस-भाजपा सरकार की अयोध्या में राममंदिर निर्माण की मुहिम उसके फासीवादी शासन को मजबूत करने के लिए एक परियोजना है, यह लोगों को आतंकित करने और उन पर बर्बर दमन करने के लिए है। यह दिखाता है कि शासक वर्गों को जनता के संघर्षों को दिशाभ्रमित, उलटने व दमन करने की, जो संघर्ष उसके शोषण व उत्पीड़न से उभर रहे हैं और जिन्हें और आगे बढ़ना चाहिए, की कितनी जरूरत है। जनता के संघर्ष बढ़ रहे हैं और चौतरफा, आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक अन्याय की चुनौती के खिलाफ इनका तेज होना लाजमी है। यह एक चुनौतीपूर्ण परिस्थिति है जिसके गर्भ में बड़ी संभावनाएं हैं। लोगों को आर्थिक कठिनाईयों, सामाजिक उत्पीड़न और जनवादी अधिकारों पर दमन के खिलाफ मौलिक रूप से संगठित करने की जरूरत है, जिसके लिए चुनौती देने का साहस और व्यवस्थित तथा लगातार प्रयास आवश्यक है।

आरएसएस भाजपा का फासीवादी शासन मुर्दाबाद!

धर्मनिरपेक्षता के लिए संघर्ष करो; लोकतंत्र के लिए संघर्ष करो!

फासीवादी शासन के खिलाफ सभी ताकतों को गोलबंद करो!

आर्थिक कठिनाईयों, सामाजिक उत्पीड़न और जनवादी अधिकारों के लिए लोगों को संगठित करो।

(भाकपा (माले) न्यू डेमोक्रेसी की केन्द्रीय कमेटी द्वारा 3 अगस्त 2020 को जारी)

खेती के तीन अध्यादेश भारतीय खेती को बदल देंगे कारपोरेट का नियंत्रण बढ़ाने के लिए सरकारी नियंत्राण समाप्त किया जा रहा है

– आशीष मित्तल

आरएसएस-भाजपा सरकार ने कोरोना प्रभावित अर्थव्यवस्था में जनता को *20* लाख करोड़ रुपये का 'राहत' पैकेज घोषित किया। उसके साथ उसने *5* जून को *3* अध्यादेश पारित करके खेती के नियंत्रक कानूनी ढांचे में बड़े परिवर्तन कर डाले। इनसे भूमि किराये पर देने; लागत वस्तुओं की आपूर्ति व दाम; फसलों के मूल्य निर्धारण, खरीददारी व बिक्री; बीज आपूर्ति तथा फसलों का प्रारूप; खद्यान्न भंडारण व प्रसंस्करण; खाद्य आपूर्ति श्रं खला, सभी प्रक्रियाओं में बदलाव हो जाएंगे। ये परिवर्तन खेती तथा ग्रामीण जीवन पर व्यापक, दूरगामी तथा गम्भीर प्रभाव डाल देंगे, जिनमें भूमि का मालिकाना, ग्रमीण अमीरों व बिचौलियों का प्रभुत्व, खाद्यान्न सुरक्षा, किसानों की आमदनी, मजदूरी दर, आदि सब बदल जाएंगे।

ये परिवर्तन शासक वर्गों की खेती में विदेशी व घरेलू कारपारेट के नियंत्रण कराने की नीतिगत दिशा को जोर देंगे और किसानों को और अधिक उनका उपांग बना देंगे। कारपोरेट घराने लम्बे समय से इन परिवर्तनों की मांग करते रहे हैं। फुटकर व्यापार में विदेशी निवेश, खेती की सब्सिडी में कटौती, राशन प्रणाली में नकदी, आदि इसी दिशा के उदाहरण हैं। जहां भारत सरकार यह उम्मीद करती है कि कारपोरेट निवेश खेती में 'विकास दर' को बढ़ाएगा और ग्रामांचल में पैसे की चाल बढ़ाएगा, वह किसानों की सुरक्षा के प्रति पूर्णतः बेपरवाह है। ये तीन अध्यादेश, एक ही साथ, किसानों, खेत मजदूरों और उपभोक्ताओं, तीनों को क्षति पहुँचाएंगे।

कोरोना लॉकडाउन ने पहले से ही कमजोर अर्थव्यवस्था को और झटका दिया है। ऐसे में जरूरी था कि भारत सरकार, देश की आधी से अधिक श्रमशक्ति, किसानों व खेत मजदूरों को राहत देती, ताकि देश के इस मौलिक हिस्से की क्रय क्षमता बढ़ने से देश के अंदरूनी बाजार पुनर्जीवित होते और उत्पादन बढ़ता। यह अवसर था जब देश की हुकूमत साम्राज्यवाद परस्ती की दिशा में परिवर्तन करती, इसके बावजूद कि अन्तर्राष्ट्रीय समझौते इसकी अनुमति नहीं देते। इस संकट में यह परिवर्तन संभव थे। पूरी दुनिया इस समय संरक्षणवाद की तरफ बढ़ रही है, और जैसे-जैसे अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार घट रहा है, विश्व व्यापार संगठन की शर्तों के अमल से देश पीछे हट रहे हैं। पर हमारे शासकों ने जनता की नहीं साम्राज्यवाद को बचाने और उसकी पूंजी की रक्षा करने का निर्णय लिया।

तीनों अध्यादेशों का मिलाजुला असर कारपोरेट पूंजी के हस्तक्षेप व नियंत्रण को बढ़ाना है पर प्रत्येक का विशिष्ट पहलू भी है। जहां आवश्यक वस्तु कानून में परिवर्तन मुख्य रूप से खाने की आपूर्ति में सरकारी निरीक्षण व नियंत्रण को समाप्त कर देगा, वहीं सरकारी मंडियों से जुड़ा अध्यादेश कम्पनियों को फसल की खरीद में पूरी छूट देता है तथा खेती में करारों से सम्बन्धित अध्यादेश कारपारेट द्वारा लागत की आपूर्ति करने में तथा खेती के उत्पादन को पुनर्गठित करने की स्थिति पैदा करता है।

आवश्यक वस्तु कानून *1955* से जुड़ा अध्यादेश

आवश्यक वस्तु उन जिन्स को कहते हैं जो लोगों के जिन्दा रहने के लिए आवश्यक हैं, यानी खाना, खाद्य तेल, जीवन रक्षक दवाएं आदि, जिनका कोई विकल्प नहीं है और जिनकी कीमतों के बढ़ने से लोगों का व्यापक हिस्सा, खासतौर से गरीब लोग परेशान होंगे।

1955 का आवश्यक वस्तु कानून, इन जिन्स की जमाखोरी व कालाबाजारी को रोकने के कानूनी प्रावधान देता है। यह सरकार को यह अधिकार देता है कि वह इन जिन्स के उत्पादन, आपूर्ति व वितरण को इस तरह विनियमित तथा प्रतिबंधित करे ताकि ये 'उचित दाम पर न्यायसंगत ढंग से वितरित तथा उपलब्ध हो सकें'। कानून की धारा *3* दाम नियंत्रित करने के लिए जमाखोरी पर रोक लगाता है।

इस कानून का अमल करने की जिम्मेदारी राज्यों पर थी। पर केन्द्र सरकार ने इस कानून में केन्द्रीय अध्यादेश लागू करके देश में शासन के संघीय ढांचे पर भी हमला कर दिया है।

भाजपा सरकार लम्बे समय से यह परिवर्तन करने की फिराक में रही है और *8* अगस्त *2019* को जारी एक आदेश से ठेका खेती के समझौतों के दायरे में हुई पैदावार को उसने इस कानून के दायरे से बाहर कर दिया था। तब उसने गेहूँ, चावल, दाल व तिलहन पर राज्य सरकारों को यह अधिकार दिया था कि स्थिति होने पर वे प्रतिबंध लगा सकती हैं, जो अब उसने छीन लिया है।

आवश्यक वस्तु (संशो धन) अध्यादेश संख्या *8/20* कहता है कि खेती के क्षेत्र में 'प्रतिस्पर्धा' बढ़ाने के लिए और 'किसानों की आय' बढ़ाने के लिए, तथा 'साथ-साथ उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा' करते हुए, 'नियामक प्रणाली

को उदार बनाना जरूरी है'। इसके लिए वह कहता है कि कानून की धारा *3* को इस तरह से संशोधित कर दिया जाए जिससे 'अनाज, दलहन, आलू, प्याज, तिलहन तथा खाद्य तेल जैसे खाद्यानों' की आपूर्ति को 'केवल असाधारण परिस्थितियों में विनियमित किया जाए'। अध्यादेश आगे कहता है कि दाम का विनियमन तभी किया जाएगा, जब 'बागवानी फसलों के फुटकर बाजार में दाम *100* फीसदी' या 'सूखी फसलों के दाम में *50* फीसदी व द्धि' पिछले *12* माह के औसत दाम पर होगी'। अर्थात, साल भर में सब्जी व फलों के दाम में *100* फीसदी की और अनाज, दलहन में *50* फीसदी तक व द्धि की अनुमति होगी!

मंडी समिति कानून में परिवर्तन

इस अध्यादेश का नाम 'आमदनी अश्वासन' दिया गया है, जबकि इसका वास्तविक असर आमदनी कम करने का होगा। आमदनी आश्वासन की अवधारणा विश्व व्यापार संगठन, विश्व बैंक तथा ढ़ेर सारे कारपोरेट पक्षधर अर्थशास्त्रियों के इस तर्क से निकलता है कि भारतीय बाजारों और विश्व बाजारों की तुलना दिखाती है कि अगर अन्तर्राष्ट्रीय दाम भारतीय किसानों को मिलता तो किसानों को भारी लाभ मिलता। इस आधार पर कहा गया कि अन्तर्राष्ट्रीय दामों पर खरीदने की क्षमता रखने वाले कारपोरेट को रोका जाना, निर्यात की छूट ना होना और 'खेतों से थाली तक' के सिद्धान्त को अमल ना कर पाने से किसानों को भारी नुकसान हुआ है। इसकी आलोचना करते हुए उन्होंने इसे निगेटिव सब्सिडी कहा है। पर उन्होंने जानबूझकर एकाधिकारवादी कम्पनियों और कई फसलों के दाम तय करने में अन्तर्राष्ट्रीय परिषदों की भूमिका को छिपाया। दुनिया के विकसित देशों में सरकारें रेट की तथा खरीद की गारंटी करती हैं, भले ही सरकारों को अपने कोष से पेमेन्ट करना हो। इसी आधार पर फसलें पैदा करने वाले मुनाफा कमा पाते हैं। भारतीय किसानों को तो अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनियां अपने अधिकाधिक मुनाफे के हिसाब से कम से कम दाम ही देंगी। भारतीय किसानों को लाभकारी दाम मिलने की गारंटी सरकारी जिम्मेदारी व नियंत्रण से ही मिल सकती है। जो दाम बाहर की सरकारें अपने किसानों को दिलाती हैं वह निश्चित तौर पर भारतीय किसानों को क्यों दिलाएंगी?

सरकार के इस अध्यादेश संख्या *10/2020* का शीर्षक है 'कृषि उपज व्यापार एवं वाणिज्य (संवर्धन एवं सुविधा) अधिनियम *2020'*। इसके उद्देश्यों में लिखा है कि इससे एक ऐसी व्यवस्था का निर्माण किया जाएगा जिसमें 'किसान एवं व्यापारियों को कृषि उपज की बिक्री व खरीद में 'चयन की स्वतंत्रता' मिलेगी, जो 'वैकल्पिक व्यापार माध्यमों' के कारण 'प्रतिस्पर्धा' बढ़ने से 'लाभकारी मूल्यों को सुगम बना देगी'; कृषि उपज की राज्य कृषि उत्पादन विक्रय कानूनों के तहत 'स्थापित मंडियों के परिसर से बाहर एक कुशल परिवहन तथा बैरियर मुक्त अन्तर्राज्य तथा अन्तःराज्य वाणिज्य का प्रोत्साहन' मिलेगा; 'ई-व्यापार के लिए सुविधाजनक ढांचे का निर्माण' होगा।

इस अध्यादेश में पांच पहलू हैं : पहला है 'किसान एवं व्यापारियों को कृषि उपज की बिक्री व खरीद में चयन की स्वतंत्रता' मिलने का। ये दोनो ही गैर बराबर ताकतें हैं। एक को अपनी फसल बेचनी है और वहीं की वहीं, तुरंत बेचनी है और पैसा प्राप्त करना है, क्योंकि उसके पास बिक्री को रोकने और फसल के भंडारण की कोई गुंजाइश नहीं है। दूसरी तरफ हैं बड़े व्यापारी, जिनके पास प्रतीक्षा करने व दूसरी जगह से खरीदने व सौदेबाजी करने की ताकत है। जाहिर है कि चयन की स्वतंत्रता बड़ी व्यापारिक कम्पनी की होगी किसानों की नहीं। ये किसी भी तरह से, 'वैकल्पिक प्रतिस्पर्धा माध्यमों' के द्वारा 'लाभकारी मूल्य' दिलाएगी। असल में यह चयन की 'स्वतंत्रता' के नाम पर बकरी और शेर को एक खूंटे से बांधा जा रहा है।

दुनिया में अनाज की *4* बड़ी व्यापारिक कम्पनियां हैं जो एबीसीडी (आर्चर डेनियल मिडलैण्ड, बुन्ज, कारगिल तथा लूई ड्रेयफुस) के नाम से जानी जाती हैं और जो कुल विश्व अनाज का *90* फीसदी व्यापार करती हैं। ये कम्पनियां केवल अनाज की खरीद व बिक्री नहीं करतीं, ये खेतों से फसल खरीदती हैं और उसका प्रसंस्करण करती हैं, ये फसल उगाने वालों को बीज, खाद व रसायन बेचती हैं और ये फसल खरीदने के बाद उसका अपने निजी भंडारों व शीतग हों में भंडारण करती हैं। कुल मिलाकर इनकी भूमिका जमीन के मालिकों की बन जाती है, पशु पालक व मुर्गी पालकों की बन जाती है, खाद्यान्न प्रसंस्करण करने, परिवहन की सुविधा देने वालों की और बाजार में वित्तीय सेवाएं देने वालों की बन जाती है। इस तरह से ये ना केवल बाजार में खाने के दाम को तय करती हैं, ये जमीन और पानी जैसे संसाधनों पर नियंत्रण बनाती हैं, ये खाने की सुरक्षा तथा पर्यावरण परिवर्तन को निर्धारित करती हैं और सभी स्तर के व्यापारियों के कामकाज को प्रभावित करती हैं। ये चारों पश्चिमी देशों की कम्पनियां हैं व इन चारों का कुल सालाना व्यापार *25* से *30* लाख करोड़ रुपये का है।

इसी तरह दुनिया का *82* फीसदी व्यवसायिक बीज बाजार *10* बड़ी बीज कम्पनियों के हाथों में है, मॉनसोन्टो, डूपॉन्ट, सिनजेन्टा, बेयर, आदि। *2007* में इन कम्पनियों ने कुल *2* लाख करोड़ डॉलर का व्यवसाय किया। और इसी तरह से दुनिया की सबसे बड़ी खाद्यान्न प्रसंस्करण कम्पनियां कारगिल, नेस्ले, पेप्सी, एडीएम, बुन्ज, आदि सभी हर साल प्रत्येक कम्पनी *4* से *8* लाख करोड़ रुपये का धंधा करती हैं। ये सभी भारतीय कृषि व खाद्यान्न बाजार में दावेदारी करेंगी।

इस अध्यादेश का दूसरा पक्ष किसानों की उपज का 'सरकारी मंडियों के परिसर के दायरे से बाहर' बैरियर

मुक्त (बाधा मुक्त) व्यापार है। इसे समझने के लिए फसल के दाम के विनियमन पर मंडी कानून क्या कहता है, उसे देखना जरूरी है।

एपीएमसी कानून (मंडी कानून) कहता है कि यह 'भारत में राज्य सरकारों द्वारा स्थापित एक व्यापार परिषद है जो सुनिश्चित करेगा कि बड़े फुटकर व्यापारियों के शोषण से किसानों को सुरक्षित रखा जाए, यह सुनिश्चित करेगा कि खेतों से फुटकर दाम तक का फर्क बहुत अधिक ना बढ़ जाए'। इसके तहत बड़े पैमाने पर मंडियों और उपमंडियों का निर्माण किया गया और हर मंडी क्षेत्र की एक मंडी समिति बनाई गयी जो अपने नियम बनाकर उन्हें अमल करती हैं। मंडी समितियां को सुनिश्चित करना हैं कि किसानों का बिचौलियों व सूदखोरों द्वारा, जो किसानों को मजबूर करते हैं कि वे अपनी फसल को खेत पर से ही बेहद कम दाम पर बेच दें, शोषण ना हो सके और इसके लिए व्यवस्था है कि सारे खाद्य पहले मंडी में आएं और फिर वहां उनकी नीलामी हो। सभी व्यापारियों को मंडी में खरीददारी करने से पहले 'लाइसेंस' प्राप्त करना होता है। थोक विक्रेताओं और फुटकर व्यापारियों को उदाहरणस्वरूप शापिंग मॉल के मालिकों और खाद्यान्न प्रसंस्करण कम्पनियों को किसानों से सीधी खरीद करने की अनुमति नहीं होती।

इस संदर्भ में उ.प्र. के मंडी अधिनियम में लिखा है कि इन मंडियों का 'उद्देश्य' उत्पादक विक्रेताओं से वसूला जाने वाले अलग-अलग व्यापार कर तथा अन्य वसूलियों को कम करना है, तौल में हेराफेरियों को रोकना है, ऐसी मंडी समितियां बनाना है जिसमें उत्पादक का प्रतिनिधित्व रहेगा, यह सुनिश्चित करना है कि पूरी मंडी के सुधार के लिए मंडी फंड के प्रयोग के फैसलों में उत्पादक के पक्ष को महत्व दिया जाए, उत्पादक विक्रेताओं को सुविधाएं दी जाएं, भंडारण की बेहतर सुविधाएं प्रदान की जाएं व बाजार की वास्तविक स्थिति से किसानों को अवगत कराया जाए।

उपरोक्त बिन्दुओं से स्पष्ट है इस अध्यादेश का उद्देश्य बड़े व्यापारियों द्वारा शोषण को पुनः स्थापित करना है, खेत के दाम और फुटकर व्यापार के बीच फर्क को अत्यधिक बढ़ाना है, जमाखोरी, बिचौलयों व सूदखोरों द्वारा शोषण को अनुमति देना है, थोक व्यापारियों और खाद्यान्न प्रसंस्करण कम्पनियों को अनुमति तथा तौल में अनियमितता और किसानों के साथ धोखधड़ी को अनुमति देना है।

अकारण नही है कि किसान यह मांग करते रहे हैं कि जो मंडी समितियां बनी हुई हैं उनके प्रशासन, प्रबंधन का जनवादीकरण किया जाए, ताकि आम किसानों की समस्याओं का हल हो, अधिरचना में सुधार हो, इसका आवरण बढ़ाया जाए और धोखाधड़ी, भ्रष्टाचार को रोका जाए और जमींदारों, बिचौलियों व ठेकेदारों का नियंत्रण समाप्त किया जाए। पर सरकार अब इन कृषि मंडी समितियों को लगभग खत्म करने के रास्ते पर आगे बढ़ रही है। अब इन समितियों में मुख्य फसलों का व्यापार नहीं होगा और इनके पास कुछ ही फसलें बचेंगी।

जहां किसान लगातार सभी फसलों के सी-*2* + *50* फीसदी के लाभकारी मूल्य की और सभी फसलों की सरकारी खरीद करने, मंडियों व सरकारी अधिकारियों की जवाबदेही सुनिश्चित करने तथा प्राथमिकता पर छोटे किसानों से खरीददारी की मांग करते रहे हैं, सरकार ने इस बार उन्हें बड़ा तमाचा लगाया है।

एमएसपी की घोषणा और सरकारी खरीद, जिसका विनियमन मंडी समिति के माध्यम से किया जाता था और आवश्यक वस्तु कानून वे प्रावधान हैं जिनका अमल सुनिश्चित करता कि किसानों को एक न्यूनतम दाम मिले, फसलों के दाम स्थायी रहें, सरकारी खरीददारी और भंडारण किया जाए। किसानों की जो आमदनी है उसकी गारंटी का सबसे बड़ा आधार है कि सरकार समर्थन मूल्य घोषित करती है और खरीददारी करती है। अब जब कारपोरेट निवेश को छूट दी जा रही है, बड़े निजी खरीददारों के इस हस्तक्षेप के बढ़ने का यह अर्थ है कि आने वाले समय में ना तो सरकार एमएसपी घोषित करेगी, ना ही खरीददारी करेगी।

इन कदमों में ही शामिल है तीसरा पक्ष, फसलों का 'बैरियर मुक्त व्यापार' जो असल में अन्तर्राज्यीय बिक्री पर रोक को समाप्त करेगा और इसके चलते बाहरी बड़े व्यापारियों द्वारा सस्ते में खरीददारी को रोकने के लिए जो भी बाधाएं व कर राज्य सरकारें लगाती थीं या किसानों को अलग से बोनस व गारंटी देती थीं, वे समाप्त हो जाएंगे।

चौथा पहलू है निर्यात व आयात तथा प्रतिस्पर्धा मूल्य निर्धारण। जैसा कहा गया है कि अब कारपोरेट भारतीय बाजारों में हस्तक्षेप के लिए मुक्त होंगे और अब फसलों के निर्यात और आयात का काम भी यही करेंगे। सरकार का इसमें कोई नियंत्रण नहीं बचेगा। विश्व व्यापार संगठन की यह शर्त कि हर सरकार अपनी फसलों की खपत का *5* फीसदी हिस्सा अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों से खरीदेगी, के चलते अक्सर भारत सरकार अनियोजित ढंग से हानिकारक निर्यात-आयात करती रही है और इसका नुकसान किसान झेलते हैं। जब किसानों की फसल बाजार में आती है तब एकाएक आयात हो जाता है और ऐसे समय पर निर्यात खुलने पर रोक लग जाती है। इस जून माह में ही भारत सरकार ने *10* हजार टन दूध का पाउडर और *5* लाख टन मक्का का आयात का आदेश दिया है, जिसका आदेश होते ही घरेलू बाजार में इनके दाम और गिर गये।

इस अध्यादेश का पांचवा पहलू है ई-व्यापार। यह अध्यादेश किसान उत्पादक संगठनों के निर्माण की बात करता है और कहता है कि व्यापारियों को कृषि व्यापार करने की अनुमति केवल केन्द्र सरकार देगी। जाहिर है यह योजना छोटे व स्थानीय व्यापारियों के पक्ष में नहीं है और इसने भी राज्य सरकार के हाथ काट दिये हैं। यह कम्पनियों को फसल खरीदने में *3* दिन बाद तक भुगतान करने की अनुमति देता है। भारत के किसानों को 'बाद में भुगतान' किये जाने का

बहुत बड़ा अनुभव गन्ने की खेती से है, जिसमें सरकारी आदेशों के बावजूद सालों-साल भुगतान लंबित रहते हैं। ई-व्यापार हेतु ऑनलाइन मंडी स्थापित करने की जिम्मेदारी सहकारी समितियों व किसान उत्पादक संगठनों को सौंपी गई है।

ई-व्यापार, ऑनलाइन मंडिया (ई-नाम - इलेक्ट्रानिक नेशनल एग्रीकल्चर मंडी) देश भर की मंडियों को आपस में ऑनलाइन जोड़कर उपज के चित्र तथा दाम के मूल्यांकन की सुविधा प्रदान करेगा। निश्चित तौर पर इसका लाभ व्यापारियों को होगा। वे तय कर सकेंगे कि उन्हें सबसे अच्छी फसल और सबसे अच्छा दाम कहां प्राप्त होगा। थोक में तथा देश भर से खरीदने की क्षमता रखने वाला ही इसका लाभ उठा सकता है। यही नहीं वह दूसरे स्थानों पर सस्ती फसल मिलने का दबाव बनाकर सभी जगहों पर फसल के दाम गिराने का भी काम करेंगे। इस तरह के बड़े व्यापारियों को बढ़ावा मिलने से स्थानीय छोटे परिवहन, छोटे व्यापारी तथा ग्रामीण लोगों के छोटे काम भी प्रभावित हो जाएंगे और बेरोजगारी और बढ़ेगी। किसान अपने गांव से बंधा है, वह इस ई-मंडी का लाभ अच्छा दाम प्राप्त करने के लिए नहीं उठा पाएगा। क्योंकि सरकारी नियम व सरकारी खरीद की कोई सुरक्षा उनके पास नहीं होगी, जिस समय किसान की फसल बाजार में आती है उसे इन बड़े व्यापारियों के दबाव में दाम गिराने पड़ेंगे। यह अध्यादेश 'एक देश एक बाजार' के नाम पर प्रचारित किया जा रहा है, जबकि किसान देश भर में लाभकारी दाम की मांग करते रहे हैं।

मूल्य अश्वासन अध्यादेश :

तीसरे अध्यादेश को 'मूल्य आश्वासन' बताया गया। यह कृषक (सशक्तीकरण और संरक्षण) कीमत आश्वासन एवं कृषि सेवा पर करार अध्यादेश, *2020*, संख्या *11/2020* है। यह 'खेती में करार' का राष्ट्रव्यापी ढांचा प्रस्तावित करता है, जो 'किसानों को कृषि व्यवसाय कम्पनियों, प्रसंस्करणकर्ताओं, थोक विक्रेताओं, निर्यातकों या कृषि सेवा तथा भावी कृषि उपज के लिए बड़े फुटकर व्यवसायियों के साथ लाभकारी मूल्य के ढांचे के लिए एक उचित व पारदर्शी तरीके से करार करने में किसानों को सुरक्षित एवं सशक्त' करने का दावा करता है। यह सभी खाद्य सामग्रियों, चारा व कपास पर लागू होगा।

इस अध्यादेश के तहत कृषि सेवाओं में सभी तरह की लागत व मशीनरी, बीज, आहार, चारा, तकनीकी, कृषि रसायन, गैर रसायनिक कृषि लागत, आदि शामिल हैं। इसकी स्थापना के बाद जाहिरा तौर पर खेती व्यवस्थित करने की सारी जिम्मेदारी से सरकार अपने को मुक्त घोषित कर देगी। समय के साथ 'सभी तरह की लागत' में सिंचाई व्यवस्था, तालाब, नहर, आदि भी शामिल कर लिये जाएंगे ताकि उनका कारपोरेटीकरण किया जा सके।

इस समझौते के दायरे में 'किसान तथा प्रायोजक' या 'किसान, प्रायोजक तथा तीसरा पक्ष' होंगे जिसमें 'पूर्व निर्धारित गुणवत्ता वाली कृषि पैदावार के उत्पादन से पहले, प्रायोजक ऐसी पैदावार को किसान से खरीदने को और कृषि सेवा देने को सहमत हो' शामिल होंगे। 'उत्पादन समझौता' में कहा है कि प्रायोजक इस बात पर सहमत होगा कि वह 'कृषि सेवाओं को, या तो पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से देने के लिए और पैदावार में आने वाले जोखिम सहने के लिए सहमत होगा, पर वह किसान द्वारा दी गयी सेवा का उसे भुगतान करने को सहमत होगा'।

समझौते में आगे स्पष्ट किया गया है कि :

कोई भी समझौता बंटाईदार के हित के विपरीत नहीं होगा (धारा *3-2*)। इसमें बटाईदारी की परिकल्पना कर उसे शामिल किया गया है।

सभी पक्ष गुणवत्ता के आंकलन और उत्पाद के पैमाने पर आपस में सहमत होंगे। कहा है कि इन बिन्दुओं में रसायनिक अवशिष्ट, खाद्य सुरक्षा पैमाने, अच्छी कृषि पद्धति, श्रम व सामाजिक विकास के पैमाने, आदि को तय करने के आधार पर पक्ष सहमत होंगे और इनकी प्रमाणिकता आपस में तय एक तीसरा पक्ष करेगा (धारा *3-4*)।

जो दाम दिया जाएगा या मूल दाम और बोनस आदि में भेद भी, समझौते में स्पष्ट किया जाएगा (धारा *3-5*)

वितरण पर भी स्पष्ट उल्लेख होगा (धारा *3-6*)।

ऐसी उपज फसल की खरीद व बिक्री से सम्बन्धित राज्य के कानून तथा आवश्यक वस्तु कानून तथा नियंत्रण आदेशों के प्रावधानों से मुक्त होगी (धारा *3-7*)।

इन करारों में एग्रीगेटर अथवा किसान उत्पादन संगठन का प्रावधान किया गया है, जो या तो खेती की सेवाओं को प्रदान करेगा और जो इस करार का हिस्सा बन सकते हैं। ऐसा व्यक्ति प्रायोजक तथा किसान के बीच बिचौलिये के काम करेगा। अध्यादेश के अनुसार किसान की जमीन छीनने के लिए कोई कार्यवाही नहीं की जाएगी।

इस कृषि करार अध्यादेश से क्या निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं ?

1. फसल का मालिकाना : खेती के सारे कामकाज एक करार के तहत आ जाएंगे। खेती का कार्य किसान की अपनी अकेले की जिम्मेदारी नहीं बचेगी, इसमें प्रायोजक कम्पनी भी नियंत्रण करेगी। यह कहना गलत होगा कि 'उत्पादन के दौरान मालिक किसान रहेगा', क्योंकि इसकी उपज प्रायोजक से बंधी हुई है। यहां मालिकाना का अर्थ केवल जिम्मेदारी से है। यह कहना कि प्रायोजक भी 'उपज का जोखिम' उठाएगा, गलत है और यह भी कि प्रायोजक किसान को उसकी सेवा के लिए भुगतान करेगा, क्योंकि किसान फसल को करार के अनुसार पैदा करने के अलावा कोई सेवा नहीं दे रहा है और प्रायोजक की केवल इतनी जिम्मेदारी है कि वह उपज का भुगतान करे, वह भी तब

जब पैदावार करार अनुसार हो।

2. लागत व सेवाएं : अगर करार होना है तो किसान को लागत व सेवाएं प्रायोजक की इच्छानुसार उससे नकद भुगतान करके खरीदनी होंगी। प्रायोजक ही आंशिक या पूर्ण रूप से सेवाएं प्रदान करेगा। उनका दावा रहता है कि इनकी गुणवत्ता अच्छी है और इसीलिए ये उसके दाम अधिक वसूलता है। आलू की खेती के चल रहे करारों का यही अनुभव है।

3. निरीक्षण व पर्यवेक्षण : सेवाओं का प्राव धान या तो प्रायोजक खुद करेगा या कृषि सेवा प्रदाता करेगा, - किसान उत्पादन संगठन अथवा एग्रीगेटर। हर सेवा का भुगतान करार के अनुसार तुरंत करना होगा, जिसमें जाहिरा तौर पर प्रायोजक का निर्देशन प्रभावी रहेगा। इसमें किसी सेवा को लेना या ना लेना किसान की अपनी इच्छा पर निर्भर नहीं रहेगा। निरीक्षण, पर्यवेक्षण और 'निजी सहमति पर नियुक्त पक्षों' की रिपोर्ट उन मामलों में किसान के सिर पर तलवार की तरह लटकी रहेंगी। इसमें अच्छी कृषि पद्धति, कीटनाशक व रसायनिक अवशिष्ट, श्रम व सामाजिक विकास पैमाने, आदि सब विवाद का हिस्सा बन जाएंगे।

4. एग्रीगेटर, किसान उत्पादन संगठन (एफपीओ) : एफपीओ, एग्रीगेटर व कृषि सेवा प्रदाता नई अवधारणा हैं। यह व्यक्ति या समूह, किसान और प्रायोजक के बीच बिचौलिये का काम करेगा और दोनों के लिए सेवाओं को एकत्र करेगा। यह किसानों की ओर से गांव की जमीन एकत्र कर प्रायोजक के लिए आकर्षक प्रस्ताव पेश करेगा। यह सेवाओं को एकत्र कर कटाई, निराई समेत सभी कामों का पर्यवेक्षण करेगा तथा उपज को प्रायोजक के लिए एकत्र करेगा। जाहिर है 'यह व्यक्ति' गांव या क्षेत्र की ताकतवर सामाजिक श्रेणी का होगा।

5. नकदी का स्रोत, जमीन की असुरक्षा : अध्यादेश में स्पष्ट नहीं है कि लागत व सेवाओं को खरीदने के लिए नकदी की आवश्यकता कहां से पूरी होगी। जब किसान ने इसका भुगतान करना है तो उसे किसी बैंक या वित्तदाता का सहारा लेना ही पड़ेगा। जाहिर है यह उधार जमीन गिरवी रखकर ही किसान को मिलेगा। जमीन से वसूली न होने का जिक्र बेइमानी है।

6. ठेका खेती में लाभ किसे मिलेगा? : इस पूरे करार में तीन तरह की ताकतें शामिल हैं और बंटाईदारी वाली जमीन हों तो चार पक्ष हैं। इसका लाभ किसे मिलेगा? जाहिर है सबसे पहले प्रायोजक को मिलेगा, दूसरे नम्बर पर एफपीओ, एग्रीगेटर या सेवा प्रदाता आएंगे और आखिर में खेत का मालिक आएगा। निश्चित तौर पर सारा कामकाज एक जगह पर संग्रहित करके किया जाएगा तो ज्यादा संगठित खेती होगी और खेत मजदूरों की जरूरत घटेगी, जबकि उनकी मजदूरी में कोई व द्धि नहीं होगी।

7. जमींदार तथा बिचौलिये : ठेका खेती जमींदारों और बिचौलियों को एक नई भूमिका में और ताकत प्रदान करेगा। यह गांव की सामान्य जमीनों के दुरुपयोग को भी बढ़ावा देगा और इस तरह से जमींदारी उन्मूलन के कुछ प्रावधानों को भी उलट देगा।

8. बंटाईदारी : ठेका खेती छोटे किसान और बंटाईदार, दोनों को बरबाद कर देगी। पहली बात तो यह उनके अपने जीवित रहने के लिए आवश्यक अनाज पैदा करने के अधिकार को समाप्त कर देगी व उन्हें बाजार से मंहगा अनाज खरीदना होगा। ठेका खेती में सारी पैदावार प्रायोजक को बेची जानी है। इसमें बंटाईदार को उसके श्रम के लिए कुछ भुगतान मात्र किया जाएगा। यह कहना कि यह करार बंटाईदार के हित के खिलाफ नहीं हैं, गलत हैं। यह करार गरीबों की खाद्यान्न सुरक्षा पर हमला हैं। आज काफी हद तक पैदा किया गया अनाज किसान अपने लिए रोक लेते हैं। यह सब बदल जाएगा।

9. जीएम बीज, हाईब्रिड बीज : ठेका खेती, जीएम बीज के, जिन्हें स्वीकृति देने से पहले बहुत सारी प्रक्रियाएं निर्धारित हैं, अनियंत्रित प्रयोग को बढ़ावा देगी। इससे कृषि मजदूरों की जगह यंत्रों के अनियंत्रित व बेहिसाब प्रयोग को भी बढ़ावा मिलेगा और खेती का पूरा प्रारूप बदल कर कारपोरेट के व्यवसायिक हितों का उपांग बन जाएगा, क्योंकि उन्हीं फसलों को कारपोरेट बढ़ावा देगा, जो उसके लिए व्यवसायिक रूप से लाभदायक हैं। इनसे बीटी बैंगन व बीटी कपास को भी बढ़ावा मिलेगा और गुजरात के किसानों पर जिस तरह से पेप्सी कम्पनी ने आलू के बीज की चोरी से उपयोग का करोड़ों रूपये का पेटेन्ट उल्लंघन का केस किया, ऐसे मामले बढ़ेंगे।

नील की खेती के कुछ अनुभव

इस संदर्भ में ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के दौरान नील की खेती पर की गयी टिप्पणियां रोचक हैं। *1823* के बंगाल नील खेती कानून तथा *1823* की बंगाल रेग्युलेशन *6* के अनुसार 'पूंजीपति अपना पैसा उधार में देता है, और कभी-कभी बीज भी, जो एक करार के अनुसार है, जिसमें एक निर्धारित जमीन की उपज उसे मिलनी है, जो या तो एक निर्धारित दाम पर होगी या एक निर्धारित मौसम के समय पर बाजार में उपज के चल रहे दाम के संदर्भ में, बाद में तय की जाएगी; और यह व्यवस्था बंगाल के प्रान्त में नील की पैदावार के लिए उगाए जा रहे उसके पौधे पर लागू है'।

एक और रिपोर्ट कहती है कि नील पैदा कराने वाले व्यापारी किसानों को अनाज की जगह नील की खेती करने के लिए राजी कर लेते थे। वे भारी ब्याज दर पर उधार देते थे। एक बार कोई किसान उनसे उधार ले लेता था तो अपने जीवन भर उसमें फंसा रहता था, उसके बाद वह अगली पीढ़ी पर चढ़ जाता था। नील पैदा कराने वाले बहुत कम दाम देते थे। किसान कोई लाभ नहीं कमा सकते थे।

व्यवसायी किसानों की सम्पत्ति को गिरवी रख लेते थे। सरकार के नियम व्यवसायियों के पक्ष में थे। *1833* के एक कानून के द्वारा व्यवसायियों को दमन करने की पूरी छूट दी गयी। जमींदार व्यवसायियों के साथ खड़े रहे।

विवाद निपटारा

इन दोनों कानूनों के तहत विवाद होने पर उसके निपटारे के लिए किसी भी सिविल कोर्ट में दावा नहीं किया जा सकेगा। इसके लिए एसडीएम द्वारा तय एक समिति बननी होगी और उसमें व एडीएम से मामला हल ना होने पर विवाद जिलाधिकारी या उसके ऊपर केन्द्रीय कृषि मंत्रालय के अधिकारी के पास जाएगा।

किसानों की आय बढ़ाना, उपभोक्ताओं की रक्षा करना :

आय बढ़ाना : इन अध्यादेशों का असर उपरोक्त दोनों उद्देश्यों के ठीक विपरीत होगा। जब सभी अनाज, दलहन, खाद्य तेल, प्याज और आलू आवश्यक वस्तु की श्रेणी से हट जाएंगे तब विशालकाय अनाज व खाद्यान्न प्रसंस्करण कम्पनियां इन फसलों को सीधा किसान से खरीदने, उनका भंडारण व जमाखोरी करने और उनका प्रसंस्करण करके एकाधिकारी दामों पर बाजार में बेचने के लिए मुक्त होंगी।

एमएसपी : दूसरा, जब ये तमाम फसलें 'आवश्यक' की श्रेणी से हट जाएंगी तो सरकार उनका न्यूनतम समर्थन मूल्य घोषित और खरीददारी नहीं करेगी। सरकार ने दूसरे शब्दों में ऐसा ही कहा कि आवश्यक वस्तु कानून बना ही तब था जब देश में खाने की कमी थी और अब जब खाने की पैदावार बढ़ रही है तब इस तरह के 'प्रतिबंधक' कानून की जरूरत नहीं है। हम सब जानते हैं कि सरकार का समर्थन मूल्य और खरीद किसानों को मुनाफा नहीं दिला रही है। पर जो कुछ असर इसका था, सरकार उसे भी समाप्त करना चाहती है। शांता कुमार कमेटी ने कहा था, क्योंकि इसका लाभ मात्र *6* फीसदी किसानों को पहुँचता है, इसलिए इस व्यवस्था को समाप्त कर देना चाहिए। सभी परिचित हैं कि सरकार राशन व्यवस्था समाप्त करना चाहती है, इसलिए यह पक्का है कि सरकार द्वारा आश्वस्त दाम, यानी एमएसपी अब समाप्त कर दिया जाए।

किसका नियंत्रण : इसका कितना व्यापक असर होगा यह एमएसपी की फसलों की सूची, जो सरकार घोषित करती है उसे देखकर पता चल जाता है। सरकार केवल *22* फसलों का एमएसपी घोषित करती है। ये हैं धान, गेहूं, जौ, ज्वार, बाजरा, मक्का, रागी, जो सातों अनाज हैं। साथ में हैं अरहर, मूंग, चना, मसूर, उड़द और सोयाबीन जो छयों दलहन हैं। इनके साथ हैं सूरजमुखी, सफेद तिल व काला तिल, सरसों, कोपरा, मूंगफली व कुसुम, जो सातों तिलहन हैं। इसके अलावा बचते हैं सिर्फ दो फसलें - कपास और जूट। गन्ना एमएसपी की श्रेणी में नहीं आता और उसका एफआरपी घोषित होता है। अध्यादेश कहता है कि नियंत्रण उदारीकृत होना चाहिए। स्पष्ट है कि नियंत्रण कारपोरेट का होगा। जिस समय किसान की फसल बाजार में आती है, या तो उस समय प्रभावशाली बाजारी ताकतों से सरकार खुद न्यूनतम दाम व खरीद करके उसे सुरक्षित करे या फिर वे बाजार के खरीददारों का शिकार बन जाएंगे। इसमें तीसरा कोई रास्ता नहीं है।

खाद्यान्न सुरक्षा : ऐसे में सरकार के पास खुद भी ना तो पर्याप्त भंडारण बचेगा ना कानूनी अधिकार जिससे वह विनाशकारी जमाखोरों व कालाबाजारियों के खिलाफ कार्यवाही कर सके।

उपभोक्ता की सुरक्षा, दाम पर नियंत्रण : ये सभी फसलें वही हैं जो आम इंसान का भोजन हैं। इन खाने के सामानों का दाम अब कितना बढ़ेगा इसकी कल्पना कोई भी कर सकता है, पर हां सरकार ने अपनी तरफ से इसकी सीमा तय की है। उसके अध्यादेश के अनुसार सूखी फसलों के दाम पिछले एक साल के औसत से डेढ़ गुना से ज्यादा नहीं बढ़ने चाहिए और साग-सब्जी आदि के दाम दोगुना से ज्यादा नहीं बढ़ने चाहिए। इसका अर्थ बहुत स्पष्ट है कि अब खाने की मंहगाई, न्यूनतम इस गति से बढ़ सकेगी।

खाद्यान्न भंडारण, एफसीआई का निजीकरण

पूर्व कृषि सचिव सिराज हुसैन ने आवश्यक वस्तु कानून को *5* साल के लिए हटाने की संस्तुति करते हुए कहा था कि इससे खाद्य भंडारण ढांचे में निजी निवेश को हम बढ़ावा दे सकेंगे। यह उपरोक्त प्रस्ताव ना केवल निजी बाजारों व गोदामों को बढ़ावा देंगे, इनसे एक से अधिक कारणों के प्रभाव से एफसीआई के वर्तमान गोदामों का भी निजीकरण कर दिया जाएगा।

एक कारण यह है कि जब सरकार समर्थन मूल्य ही नहीं घोषित करेगी तो वह खरीद व भंडारण क्यों करेगी?

दूसरा यह कि एफसीआई पर *1* मार्च *2019* को *2.65* लाख करोड़ रुपये का उधार था। यह उधार चढ़ने की प्रक्रिया *2010* से शुरु हुई और *2014* में यह *91,409* करोड़ रुपये था। इन *5* सालों में यह *190* फीसदी बढ़ गया। इसका कारण यह है कि सरकार के अनुसार अनाज के भंडारण, लदाई, परिवहन, व वितरण में उसका खर्च करीब-करीब *10* रुपये किलो बैठता है। यह रकम खाद्यान्न सब्सिडी में जोड़ी जाती है परन्तु इस पूरी रकम का भुगतान सरकार एफसीआई को नहीं करती रही है। जितना भुगतान सरकार नहीं करती, उतना वह एफसीआई से उधार लेने को कह देती है, जो उधार एफसीआई ने राष्ट्रीय लघु बचत कोष से ले रखा है। यह उधार वापस होना है। कहां से वापस किया जाएगा, आप खुद सोच सकते हैं।

ऐसी है सरकार की किसानों की आय दोगुना करने की योजना।

का. लिंगन्ना की शहादत की पहली वर्षगांठ

पिछले साल *31* जुलाई को कम्युनिस्ट क्रांतिकारी आन्दोलन में अपने एक बहादुर योद्धा को खो दिया था जब गोदावरी घाटी विरोध संघर्ष के नेता का. लिंगन्ना को तेलंगाना प्रान्त के भदादरी-कोठागुडम जिले के गोण्डाला मंडल में रोलगड्डा गांव के निकट पुलिस ने मार दिया था।

जिस उद्देश्य के लिए का. लिंगन्ना ने अपने जीवन का बलिदान दिया- जनता को मुक्त करने और भारत में नवजनवादी क्रांति सम्पन्न करने- वह आज भी प्रासंगिक है। उन्होंने

भारतीय लोगों की जीविका के साधन और जमीन की रक्षा के क्रम में अपने जीवन का बलिदान दिया, जो काम केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा आदिवासी लोगों पर किये जा रहे हमलों के चलते आज और ज्यादा आवश्यक हो गया। बल्कि इस तरह के हमलों के तेज होने से स्पष्ट है कि सरकार द्वारा विदेशी व घरेलू कारपोरेट को इन वनीय क्षेत्रों को देने के लिए आदिवासी जनता को इन इलाकों से जबरदस्ती उजाड़ने के प्रयास तेज हो रहे हैं। वन अधिकार कानून ढंग से लागू नहीं किया गया और मोदी सरकार ने इन क्षेत्रों का कारपोरेट द्वारा शोषण किये जाने के लिए इसके प्रावधानों को कमजोर कर दिया है। का. लिंगन्ना भाकपा (माले) न्यू डेमोक्रेसी की तेलंगाना राज्य कमेटी के सदस्य थे और गोदावरी घाटी प्रतिरोध संघर्ष के एक प्रमुख नेता। उन्होंने इस आन्दोलन में एक बड़ा योगदान किया था, खासतौर से विपरीत परिस्थितियों में इसके जारी रखे जाने के लिए।

प्रतिरोध संघर्ष गम्भीर चुनौतियों को सामना कर रहा है। केन्द्र व राज्य सरकारों ने इसे अपने हमलों के निशाने पर लिया हुआ है। वे आदिवासियों व अन्य वनवासियों को रक्षा विहीन करना चाहते हैं, इस वजह से वे इस आन्दोलन के खिलाफ अपने हमले तेज कर रहे हैं - राजनीतिक हमला और सुरक्षा बलों के माध्यम से भी। वर्तमान परिस्थिति प्रतिरोध संघर्ष के लिए चुनौतीपूर्ण है। शासक फासीवादी ताकतों द्वारा हमलों को तेज किये जाने से ये कार्य और चुनौतीपूर्ण बन गया है और आवश्यक भी। कोरोना महामारी के नाम पर सभी विरोध को रोकने के सरकार के प्रयासों ने स्थिति को और जटिल बना दिया है। वर्तमान परिस्थिति प्रतिरोध संघर्ष को रक्षित व विकसित करने के लिए नए प्रयास की मांग कर रही है।

का. लिंगन्ना के अनुभवों से सीखते हुए और उनके जीवन व बलिदान से प्रेरणा लेते हुए हमें अपने व्यवहार को द ढ़ करना चाहिए। का. लिंगन्ना पूरी तरह पार्टी व उसकी क्रांतिकारी समझ के प्रति समर्पित थे। हमें उनके जीवन व कार्य से सीखते हुए नवजनवादी क्रांति की जीत के लिए अपने आपको पुनर्समर्पित करना चाहिए।

का. लिंगन्ना को लाल सलाम!

भाकपा (माले) न्यू डेमोक्रेसी
31 जुलाई, *2020*

का. पल्टू सेन की 7वीं बरसी

7 साल पहले *30* जुलाई *2013* को कम्युनिस्ट क्रांतिकारी आन्दोलन और क्रांतिकारी ट्रेड यूनियन आन्दोलन ने एक बहुमूल्य नेत त्वकारी साथी को खो दिया था। आइएफटीयू के राष्ट्रीय कमेटी के अध्यक्ष और भाकपा (माले) न्यू डेमोक्रेसी के सदस्य का० पल्टू सेन का उस दिन देहान्त हुआ था।

लगभग पांच दशकों तक का० पल्टू सेन ने भारत में नवजनवादी क्रांति के लिए पूरे जी-जान से काम किया : अपने छात्र जीवन से लेकर अपनी अंतिम सांस तक। उनका जीवन क्रांति के प्रति पूर्ण समर्पण का एक शानदार उदाहरण है। उनकी इस पुण्यतिथि पर आइये हम भारत में नवजनवादी क्रांति को सफल बनाने के अधूरे काम के प्रति अपने जीवन को भी समर्पित करें। उनकी क्रांतिकारी स्म ति को यही सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

का० पल्टू सेन ने मजदूर वर्ग के कई संघर्षों का नेत त्व किया और क्रांतिकारी ट्रेड यूनियन का निर्माण करने के लिए अथक प्रयास किया। वह लगभग *3* दशक, *1984* से *2013* तक, आईएफटीयू के अध्यक्ष रहे। ऐसे समय पर जब भारत के मजदूर, सरकार द्वारा कोरोना महामारी का लाभ उठाते हुए किये जा रहे अभूतपूर्व हमलों का सामना कर रहे हैं; जब मजदूर रोजगार छीनने और जीविका और जीवन पर हमलों की अभूतपूर्व स्थिति का सामना कर रहे हैं; जब बेरोजगारी, दरिद्रता और भुखमरी उनके सामने मुंह बाये खड़ी है, उन्हें संघर्ष में गोलबंद किया जाना नितान्त आवश्यक है। हमें मजदूर वर्ग के आन्दोलन का विकास करने और संघर्ष की भाषा में उनकी आवश्यकताओं को पिरोने में का० पल्टू सेन के उदाहरण का अनुसरण करना चाहिए।

भाकपा (माले) न्यू डेमोक्रेसी
30 जुलाई, *2020*

गलवान घाटी

चीन-अमेरिकी मंसूबे और भारत सरकार

कमल सिंह

अमेरिकी साम्राज्यवाद आज भी एक अतिमहाशक्ति है परंतु वह डूबता हुआ जहाज है। चीन अब समाजवादी नहीं रहा। वह स्वयं वैश्विक अतिमहाशक्ति बनने की दिशा में अग्रसर है। यह युग है जिसमें पूंजीवादी-साम्राज्यवादी व्यवस्था संकटों से घिरी है और क्राति ही एकमात्र विकल्प है। चीन के साथ युद्ध के नाम पर अमेरिका के फंदे में फंसने का हश्र देश में फासीवादी तानाशाही को पनपाना होगा। साम्राज्यवादी लूट से देश को मुक्त करके ही लोकतंत्र की हिफाजत, जनता का जनवाद और आत्मनिर्भरता हासिल हो सकती है; किसी भी देश जिसका मंसूबा भारत विरोधी है उसे मुंहतोड़ जवाब दिया जा सकता है।

गलवान घाटी में वास्तविक नियंत्रण रेखा (**LAC**) पर *15* जून *2020* को हुए टकराव के बाद प्रधान मंत्री नरेन्द्र मोदी जम्मू दौरे पर गए। उन्होंने लेह में जवानों को संबोधन में चीन को इंगित करते हुए कहा,"विस्तारवाद का युग समाप्त हो चुका है। यह युग विकासवाद का है। तेजी से बदलते हुए समय में विकासवाद ही प्रासंगिक है। विकासवाद के लिए अवसर है और विकासवाद भविष्य का आधार भी है।" भारत और चीन की गिनती दुनिया में सबसे तेजी से विकासमान अर्थव्यवस्थाओं के रूप में होती है। इस विकास की एक तस्वीर है कि भारत में अम्बानी, अडानी जैसे एक प्रतिशत अत्यधिक धनी "सुपर रिच" पूंजीपतियों के पास देश की *67* प्रतिशत संपत्ति और आम जनता के समक्ष बेरोजगारी, असामनता और गरीबी। कुछ ऐसी ही अवस्था चीन की है। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की *19*वीं कांग्रेस में चीन के संविधान में संशोधन करके माओ विचारधारा के स्थान पर "शी जिंगपिंग विचारधारा" को अपनाया गया है। वीन ने विकास का जो रास्ता अख्तियार किया है उसे नाम दिया है 'चीन का विशिष्ट समाजवादी मॉडल'। इसके अंतर्गत वहां बाजार अर्थ व्यवस्था, शेयर मार्केट के बुलबुले, बहुराष्ट्रीय कंपनियां और बढ़ती असमानता चीनी किस्म का यह विशिष्ट समाजवाद है। इसे चीन के प्रधानमंत्री ली क्विंग के एक बयान के माध्यम से बखूबी समझा जा सकता है। बिजिंग में *28* मई, *2020* आयोजित सालाना संवाददाता सम्मेलन में उन्होंने बताया,''चीन की औसत प्रति व्यक्ति आय *30* हजार युआन यानी *4,193* डालर है। इनमें से *60* करोड़ से अधिक लोग ऐसे हैं जिनकी मासिक औसत आय महज एक हजार युआन यानी करीब *140* डालर है। यह आय चीन के किसी शहर में एक कमरे के किराये के लिये भी पर्याप्त नहीं है।'' आज चीन में करोड़पतियों की तादाद लाखों में है। कुछ लोग तो बहुत ही अमीर हैं। वे दुनिया के सबसे अमीर लोगों की सूची में आते हैं। वर्ग समाज में विकास का एक वर्गीय अर्थ भी होता है। नरेंद्र मोदी गलवान घाटी के भारत चीन संघर्ष के सिलसिले में जिस विकास और विकासवाद की बात कर रहे हैं उसे आर्थिक और क्षेत्रीय प्रभुत्व की प्रतिद्वंद्वता से काट कर देखना कठिन है।

अमेरिका की प्रतिक्रिया

जीडीपी को विकास का पैमाना मानने पर उसके अनुसार इस समय दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था अमेरिका और उसके बाद चीन है। इन दोनों के बीच इस समय व्यापार युद्ध (ट्रेड वार) जारी है। गलवान घाटी की घटना के अगले दिन *16* जून, रात ११.३० बजे (भारतीय समय से) व्हाइट हाउस में आयोजित एक बैठक में अमेरिकी खुफिया एजेंसियों ने भारत-चीन विवाद पर एक रिपोर्ट पेश की। इस मीटिंग के बाद जारी बयान में कहा गया,''एलएसी (वास्तविक नियंत्रण रेखा) के हालात पर हम करीबी नजर रख रहे हैं। भारतीय सेना के *20* जवान मारे गए हैं। अमेरिका इस पर शोक व्यक्त करता है। हमारी संवेदनाएं सैनिकों के परिवारों के साथ हैं।'' ट्रम्प ने भारत-चीन के बीच सीमा विवाद में मध्यस्थता के अपने मंसूबे को इन शब्दों में व्यक्त किया,''वहां मुश्किल हालात पैदा हो गए हैं। दोनों देश गंभीर समस्या से गुजर रहे हैं। हम भारत और चीन से बात कर रहे हैं। देखते हैं क्या होता है। हमारी तरफ से सुलह की कोशिश हो रही है।" इस बयान के एक माह पहले भी उन्होंने भारत-चीन के सीमा विवाद को लेकर मध्यस्थता की पेशकश की थी। व्हाइट हाउस की उक्त बैठक में अमेरिका के विदेश मंत्री माइक पोम्पियो भी थे। जर्मनी में नाटो सैनिकों की संख्या कम करने के संदर्भ में एक सवाल के जवाब में पोम्पियो ने कहा, "भारत और दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के लिए चीनी खतरा एक कारण है कि अमेरिका यूरोप में अपनी सैन्य उपस्थिति कम कर रहा है और उन्हें अन्य स्थानों पर तैनात कर रहा है।" चीन को लक्ष्य कर अमेरिकी विदेश मंत्री का कथन है, "चीन जमीनी स्तर पर अपनी रणनीतिक स्थिति का अपने लाभ के लिए उपयोग कर रहा है और दूसरों के लिए खतरा पैदा कर रहा है। भारत के साथ लगी अपनी सीमा पर भी वह लंबे समय से इसी तरह की हरकत कर रहा है।" चीन-भारत सीमा पर और दक्षिण चीन सागर को लेकर चीन के आक्रामक रवैये के संबंध में *25* जून को ब्रसेल्स फोरम के एक सम्मेलन के बाद 'फॉक्स न्यूज' को एक साक्षात्कार में पोम्पिओ ने चीन को "वास्तविक खतरा" बताया। पोम्पियो से पूछा गया था कि अमेरिका ने जर्मनी में अपने सैनिकों की संख्या में कमी क्यों की है। जवाब में अमेरिकी विदेश मंत्री ने कहा, "अमेरिकी सैनिकों को अन्य स्थानों पर चुनौतियों का सामना करने के लिए ले जाया जा रहा था। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की हालिया

हरकतों का मतलब है कि भारत और वियतनाम, इंडोनेशिया, मलेशिया, फिलीपींस जैसे देशों और दक्षिण चीन सागर क्षेत्र में खतरा बढ़ रहा है। अमेरिकी सेना, हमारे समय की चुनौतियों का पूरी तरह सामना करने के लिए उचित रूप से तैनात है।" जाहिर है, भारत-चीन सीमा विवाद में अमेरिका की दिलचस्पी बेवजह नहीं है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ/ भाजपा का रुख

लद्दाख-अक्साई चिन सीमा स्थित गलवान घाटी पर वास्तविक नियंत्रण रेखा के निकट भारत और चीन के सैनिकों के बीच इस मुठभेड़ के बाद भाजपा के महासचिव व राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के थिंक टैंक के सदस्य राममाधव ने महत्वपूर्ण वक्तव्य दिया है। संघ के मुखपत्र आर्गनाइजर की ओर से "भारत चीन सीमा-विवाद" विषय पर आयोजित विचार सम्मेलन को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा, "मौजूदा संघर्ष का समाधान कूटनीतिक और सैन्य स्तर पर चीन को सक्रिय रूप से घेरना है। .. हमारा दावा केवल वास्तविक नियंत्रण रेखा (LAC) तक नहीं, इससे आगे है। जम्मू और कश्मीर में पाकिस्तान के कब्जे वाला कश्मीर और लद्दाख केंद्र शासित प्रदेश में गिलगित-बाल्टिस्तान और अक्साई चिन भी इसमें शामिल हैं।" अमित शाह भी कश्मीर में धारा *370* खत्म करते समय संसद में अक्साई चिन और पाक अधिक त कश्मीर के भारत में विलय का संकल्प ले चुके हैं। "कूटनीतिक और सैन्य स्तर पर चीन को सक्रिय रूप से घेरने" की नीति की आगे व्याख्या करते हुए राम माधव ने बताया, "आज का आक्रामक चीन मुखर भारत का नतीजा है।" संघ के प्रवक्ता भाजपा महासचिव ने मोदी सरकार को भी नसीहत दी, "भारत जैसी मुखरता पाकिस्तान के साथ नियंत्रण रेखा पर दिखाता है उसी तरह की तत्परता चीन के साथ भी वास्तविक नियंत्रण रेखा पर दिखानी चाहिए।" भारत चीन सीमा विवाद पर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के विचारक के वक्तव्यों से स्पष्ट है कि भारत की ओर से चीन से पंगा लेने की पूरी तैयारी है। यह बात दूसरी है पाकिस्तान या बर्मा (म्यांमार) की सीमा पार करके सर्जिकल स्ट्राइक का जैसा "शौर्य" प्रद शत किया गया था, चीन के साथ विवाद में उसके उलट प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने *20* भारतीय जवानों के मारे जाने के बाद आयोजित सर्वदलीय बैठक के बाद जारी बयान में बस इतना कहा, "ना कोई हमारे क्षेत्र में घुसा है और ना किसी पोस्ट पर क़ब्ज़ा किया है।" कूटनीतिक संघर्षों में एक दीर्घकालीन नीति होती है और एक तात्कालिक नीति। वार्ता द्वारा शांतिपूर्ण समाधान के लिए शुभाकांक्षियों की नेक ख्वाहिशों के बरबक्स हकीकत यही है कि दोनों पक्ष तात्कालिक तौर पर परस्पर वार्ता और दीर्घकालीन रणनीति के तहत युद्ध की व्यूहरचना में मशगूल हैं।

क्या है गलवान घाटी?

गलवान नदी अक्साई चिन की जिन वादियों से गुजरती है उसे गलवान घाटी कहते हैं। यह नदी काराकोरम पहाड़ियों से निकलती है। यह चीन के दक्षिणी शिनजियांग से लगभग *80* किलोमीटर का फासला तय करके भारत के लद्दाख में श्योक नदी (सिंधु नदी की सहायक नदी) से मिलती है। गलवान घाटी पश्चिम में लद्दाख और पूर्व में अक्साई चिन के बीच करीब *12-13* हजार फीट की उंचाई पर स्थित है। यह पाकिस्तान, चीन के शिनजियांग और लद्दाख की सीमा के साथ सटी होने के कारण सैन्य द ष्टि से काफी महत्वपूर्ण है। गलवान घाटी का बड़ा क्षेत्र अक्साई चिन के अंतर्गत चीन के नियंत्रण में है परंतु इसका एक भाग वास्तविक नियंत्रण रेखा के आगे भारत की तरफ भी है। यहां से गुजर कर यह नदी श्योक नदी में मिलती है। भारत ने यहां घाटी के पश्चिमी छोर पर *255* किलोमीटर लंबी सड़क बनाई है। श्योक नदी और दरबूक-श्योक-दौलत बेग ओल्डी पर इस सड़क के साथ एक पुल का भी निर्माण किया है। चीन को इस पर एतराज है। अक्साई चिन से सटी हुई गलवान घाटी पूर्वी लद्दाख से अक्साई चिन पहुंचने के लिए यह सबसे करीब का रास्ता है। चीन के लिए भी यह पूर्वी लद्दाख पहुंचने के लिए रास्ता है। चीन अगर यहां कब्जा करता है तो वो युद्ध की स्थिति में भारतीय सेना की डीबीओ सप्लाई लाइन काट सकता है। यह सड़क गलवान घाटी के करीब है। श्योक नदी तक पूरी गलवान घाटी पर चीन द्वारा किए जा रहे संप्रभुता के दावे का अभिप्राय समझा जा सकता है।

विवादित सीमा

भारत और चीन की सीमा निर्धारित नहीं, विवादित है। भारत के अनुसार इसकी लंबाई *3,488* किलोमीटर है। जम्मू-कश्मीर यानी कि पश्चिमोत्तर में यह *2152* किलोमीटर, बीच में जहां हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड हैं *625* किलोमीटर और पूर्वोत्तर में अरुणाचल (इसे नेफा यानी कि उत्तर पूर्व सीमा एजेंसी कहा जाता था) से यह तिब्बत-भूटान-भारत सीमा त्रिकोण तक *1,140* किलोमीटर है। भारत यहां मॅकमहन रेखा को सीमा मानता है जबकि चीन इस सीमा रेखा को स्वीकार नहीं करता है। उसका कहना है कि जिस शिमला समझौते को मॅकमहन रेखा का आधार बनाया गया है उस समझौते के लिए चीन की स्वीक ति हासिल नहीं की गई थी। तिब्बत संप्रभु राज्य नहीं रहा है बल्कि चीन का ही हिस्सा रहा है। अंग्रेजों ने तिब्बत को चीन का अंग स्वीकार करने के बावजूद तिब्बत के प्रतिनिधि के साथ समझौता किया। इस क्रम में अरुणाचल को लेकर चीन का कहना है कि यह दक्षिण तिब्बत का हिस्सा है। भारत यहां *90* हजार वर्ग किलोमीटीर (*36* हजार वर्गमील) चीन की भूमि पर नाजायज काबिज है। पश्चिमोत्तर में भारत का कहना है चीन ने अक्साई चिन पर नाजायज कब्जा कर लिया है। सूचना के अधिकार के तहत भारतीय विदेश मंत्रालय के चीन प्रभाग से मिली जानकारी के मुताबिक चीन ने भारत के कुल *43,180* वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर अवैध रूप से

कब्जा कर रखा है। इसमें जम्मू कश्मीर में भारत की भूमि का लगभग *38* हजार वर्ग किलोमीटर भूभाग चीन के कब्जे में है। इसके अतिरिक्त *2* मार्च *1963* को चीन तथा पाकिस्तान के बीच हस्ताक्षरित चीन-पाकिस्तान 'सीमा करार' के तहत पाकिस्तान ने पाक अधिक त कश्मीर का *5180* वर्ग किलोमीटर क्षेत्र चीन को दे दिया है।

इस तरह अक्साई चिन जिसे भारत लद्दाख का भाग मानता है, चीन के कब्जे में है उसी तरह अरुणाचल जिसे चीन दक्षिण तिब्बत मानता है, भारत के कब्जे में है। यह स्थिति कमोबेश वही है जिसका तसकिरा गांधीवादी सर्वोदयी सुंदरलाल ने मेनस्ट्रीम में लिखे पत्र में किया था। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी और सरकार के सर्वोच्च नेता निकिता ख्रुश्चेव के साथ चर्चा के आधार पर सुंदर लाल ने लिखा था कि अक्साई चिन पर भारत अपना दावा छोड़ने पर राजी हो जाए बदले में चीन नेफा (अरुणाचल) पर दावेदारी छोड़े इस आधार पर समझोता हो सकता है।

अक्साई चिन

चीन, पाकिस्तान और भारत के संयोजन में तिब्बती पठार के उत्तर पश्चिम में अक्साई चिन तिब्बती पठार का हिस्सा नहीं है। यह कुनलुन पर्वतों के मध्य स्थित है। अक्साई चिन का सबसे निचला हिस्सा *14000* फीट ऊंचाई पर है और सबसे ऊंचा *22500* फीट की ऊंचाई पर है। इसके ज्यादातर हिस्से में आबादी नही है। यहां के मैदान में कई नमक की झीलें और सोडा के मैदान हैं। यहां किसी तरह की वनस्पति नहीं उग सकती। मध्य एशिया की सबसे ऊंचाई पर होने के कारण रणनैतिक रूप से महत्वपूर्ण है।

अक्साई चिन का क्षेत्रफल *37,244* वर्ग किलोमीटर है। यह गोवा से करीब दस गुना, सिक्किम से करीब पांच गुना और मणिपुर से करीब डेढ़ गुना बड़ा है। यह कश्मीर के कुल क्षेत्रफल का करीब *20* प्रतिशत है। भारत के अनुसार अक्साई चिन लद्दाख के अंतर्गत आता है जबकि चीन में यह शिंजियांग प्रांत के काश्गर विभाग के अंतर्गत है। चीन के शिंजियांग और तिब्बत के मध्य संपर्क अक्साई चिन के रास्ते से ही मुमकिन है। *1950* के दशक में चीन ने शिंजियांग और तिब्बत को जोड़ने के लिए सड़क बनाई। अक्साई चिन भारत को रेशम मार्ग से जोड़ने का ज़रिया था और हज़ारों साल से मध्य एशिया के पूर्वी इलाकों (जिन्हें तुर्किस्तान भी कहा जाता है) और भारत के बीच संस्क ति, भाषा और व्यापार का रास्ता रहा है। भारत से तुर्किस्तान का व्यापार मार्ग लद्दाख़ और अक्साई चिन से होते हुए काश्गर शहर जाता था।

अक्साई चिन को लेकर पं. जवाहरलाल नेहरू ने *4* सितंबर, *1954* को लोकसभा को बताया था, "लद्दाख और तिब्बत के बीच सीमा सुस्पष्ट नहीं है। बरतानिया सरकार के जो अधिकारी इस क्षेत्र में गए उन्होंने सीमा निश्चित करने के कुछ प्रयत्न जरूर किए हैं परंतु सीमा का कभी कोई सर्वेक्षण संपन्न हुआ है इसमें मुझे संदेह है। बरतानिया सरकार के प्रयास से जो सीमा निश्चित की गई है वह हमारे पक्ष में प्रस्तुत नक्शों पर अंकित है। यह सीमांकन किसी समझौते के आधार पर नहीं बल्कि अंग्रेज अधिकारियों द्वारा ही अंकित है। वास्तविक तथ्य यह है कि यह क्षेत्र लगभग निर्जन है। यही कारण है कि सीमांकन के मामले में कभी कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। यहां होने वाली गतिविधियां इतनी अलग-थलग और अनजान रहीं कि कभी किसी ने ध्यान नहीं दिया।"

नेहरू ने *12* सितंबर, *1959* को लोकसभा में अपने बयान में फिर दोहराया, "भारतीय मानचित्रों में अक्साई चिन निस्संदेह भारतीय क्षेत्र के अंतर्गत है। इसके बावजूद मैं समझता हूं अन्य क्षेत्रों की तुलना में यह काफी अलहदा किस्म का मामला है। अक्साई चिन का कौन सा अंग हमारा है और कौन सा दूसरे पक्ष का बेशक यह विवादित मसला है। यह सुस्पष्ट और सुनिश्चित नहीं है। सदन को मैं यह स्पष्ट बताना चाहता हूं कि यह तथ्य सुनिश्चित नहीं है। यह विवाद आज ही उत्पन्न हुआ हो, ऐसा भी नहीं है। यह तथ्य विगत *100* वर्षों से विवादित चला आ रहा है। मैं इस विषय पर मनमाने तरीके से कुछ भी कहने में असमर्थ हूं। मुख्य बात यह है कि इस क्षेत्र में सीमा निर्धारण कभी नहीं हुआ और यह एक विवादित क्षेत्र रहा है।"

दरअसल, पश्चिमोत्तर में शिमला समझौता तिब्बत और ब्रिटिश भारत सरकार के बीच हुआ था और मॅकमहन रेखा उसे चिन्हित करती है परंतु जम्मू कश्मीर ब्रिटिश भारत का अंग नहीं था। वह स्वतंत्र रियासत था। इसलिए मॅकमहन रेखा जैसी कोंइ चीज यहां नहीं है।

तिब्बत और भारत-चीन विवाद

भारत और चीन के बीच अधिकारिक सीमांकन नहीं होना विगत सात दशक से चले आ रहे सीमा विवाद में मुख्य पेच है। यहां समस्या *1950* से शुरु हुई। चीन में नवजनवादी क्रांति संपन्न होने के बाद, चीन की जनमुक्ति सेना ने तिब्बत में प्रवेश किया, उस समय भारत सरकार ने विरोध जाहिर किया था। शुरुआत दोनों देशों के मध्य पत्रयुद्ध से हुई। पं. जवाहर लाल नेहरू ने संसद (लेजिस्लेटिव असेंबली) में अपने बयान में कहा कि तिब्बत में चीन की संप्रभुता सीमित है। वह विदेशी और घरेलू मामलों में स्वतंत्र है। वह चीन का हिस्सा नहीं बल्कि स्वतंत्र अधिराज्य (सुजेरेंट) है। भारत सरकार की ओर से चीन को *27* अक्टूबर, *1950* को प्रेषित प्रतिरोध पत्र में चीन की जनमुक्ति सेना को तिब्बत में भेजना "अन्य देश" पर "चढ़ाई" कहा गया था। तिब्बत-सिक्किम पर सक्रिय तिब्बतियों के कालिंगपांग गुट ने संयुक्त राष्ट्र संघ को तार देकर तिब्बत को स्वतंत्र देश के रूप में मान्यता देने और चीन से तिब्बत की रक्षा करने की मांग की थी।

ब्रिटेन और अमेरिका चाहते थे कि तिब्बत के सवाल पर

भारत और चीन आपस में भिड़ जाएं। दूसरा विश्वयुद्ध समाप्त होते ही अमेरिका नीत पूंजीवादी देशों और समाजवादी देशों इन दो शिविरों में टकराव प्रारंभ हो गया था। इसे शीत युद्ध भी कहा जाता है। भारतीय सीमा सुरक्षा के अंतिम अंग्रेज ऑफिसर इन कमांड लैफ्टीनेन्ट जनरल फ्रांसिस ठक्कर ने *1947* में ही सुझाव दिया था, "चीन के पहले भारत को यह सोचना चाहिए कि वह तिब्बत के पठारों पर कब्जा करने के लिए अग्रसर हो।" अमेरिका के राष्ट्रपति ट्रुमेन ने भारत को आश्वस्त किया था कि अगर भारत तिब्बत में एक बटालियन सेना भेजेगा तो अमेरिका सहयोग में परिवहन विभान भेजने के लिए तैयार है। तिब्बत में सेना भेजने के विषय पर विचार करने के लिए भारतीय विदेश सचिव ने एक बैठक आहूत की थी। उस समय इस बैठक में चीन में नियुक्त भारतीय राजदूत के.एम. पणिकर, सेना प्रमुख के एम करिअप्पा और भारतीय गुप्तचर ब्यूरो के प्रमुख बी.एन. मलिक शामिल थे। मलिक ने इस बैठक का जिक्र करते हुए बताया है,"चीन को रोकने के लिए भारत तिब्बत में फौज भेजे इस प्रस्ताव से पणिकर सहमत नहीं थे। वे इस मुद्दे पर अंतर्राष्ट्रीय कूटनीति और वैधानिक जवाबदेही को लेकर चिंतित थे। जनरल करिअप्पा ने भी ऐसे अभियान के लिए सैनिक उपलब्ध कराने में असुविधा जताई थी।"

संयुक्त राष्ट्र संघ में कालिपांग गुट ने तिब्बत को स्वतंत्र देश बताकर उसकी स्वतंत्रता की रक्षा करने की मांग की थी। इस विषय को संयुक्त राष्ट्रसंघ में उठाने के लिए अल सल्वाडोर को तैयार किया गया था। मकसद था, ऐसी स्थिति बनाई जाए कि भारत को तिब्बत में सेना भेजने का औचित्य मिले। दिक्कत यह थी कि संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद के स्थायी सदस्य के रूप में चीन वीटो अधिकार प्राप्त सदस्य था। संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद में चांग काई शेक सरकार उस समय चीन का प्रतिनिधित्व कर रही थी। वह भी तिब्बत को चीन का ही अंग मानती थी। ऐसी स्थिति में तिब्बत को स्वतंत्र मानकर उसकी रक्षा में सेना भेजने का समर्थन नहीं किया जा सकता था। इस स्थिति में अमेरिका, ब्रिटेन आदि अन्य पूंजीवादी देश तिब्बत की स्वतंत्रता की पैरवी नहीं कर सके क्योंकि चांग काई शेक उन्हीं के खेमे का सदस्य था और वह वीटो का प्रयोग कर इस प्रस्ताव को रोक सकता था। एक और बड़ी दिक्कत यह भी थी कि दुनिया में एक भी ऐसा देश नहीं था जिसकी तिब्बत के साथ इस प्रकार की कभी कोंइ संधि रही हो, जिसे आधार बनाकर तिब्बत स्वतंत्र देश है इसे सिद्ध किया जा सके। पं. जवाहरलाल नेहरू ने इस संदर्भ में सरदार वल्लभ भाई पटेल को पत्र लिखा, "सुरक्षा परिषद का कोई भी सदस्य तिब्बत की अपील को प्रायोजित करने के लिए उत्सुक नहीं है। सुरक्षा परिषद में इस अपील पर विचार करने के लिए इसे प्रस्तुत किया जाएगा ऐसी संभावना भी काफी कम है।... ध्यान रहे बरतानिया, अमेरिका या अन्य कोई देश ऐसा नहीं है, जिसे तिब्बतियों या उनके देश के भविष्य में दिलचस्पी हो। उनकी दिलचस्पी चीन को शर्मिंदा करने और उसके लिए उलझने उत्पन्न करने तक सीमित हैं, जबकि हमारा मकसद तिब्बत है। हमारा यह मकसद यदि पूरा नहीं होता है तो इस दिशा में आगे बढ़ने पर नाकमयाबी हाथ लेगेगी।"

तिब्बत को स्वतंत्र राज्य या बफर स्टेट के रूप में विकसित करने का मकसद तब पूरी तरह बेमतलब हो गया जब *23* मई *1951* को चीन गणराज्य और तिब्बत की स्थानीय सरकार के मध्य *17* सूत्रीय समझौता हो गया। इसके आधार पर तिब्बत का चीनी जनवादी गणराज्य में विलय हो गया। दलाई लामा ने भी माओ जेदुंग को तार भेजकर समझौते की पुष्टि कर दी।

अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त ब्रिटिश दार्शनिक बट्रेंड रसल (भारत के स्वतंत्रता संग्राम में भी जिनका योगदान रहा है) का कहना था कि जवाहरलाल नेहरू चीन के साथ सीमा विवाद को अंतर्राष्ट्रीय पंचनिर्णय या अंतर्राष्ट्रीय न्यायाधिकरण को सौंपना चाहते थे। भारतीय रक्षा मंत्री वी. क ष्णा मेनन का सुझाव था अक्साई चिन क्षेत्र चीन को पट्टे पर दे दिया जाए और बदले में भूटान-तिब्बत-सिक्किम की सीमा के मिलन बिंदु पर स्थित चुंबी घाटी (डोकलाम यहीं पर है) भारत को चीन इसी प्रकार प्रदान कर दे। लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने भारत चीन सीमा विवाद को हल करने के लिए *1964* में सुझाव दिया था, "अक्साई चिन का वह क्षेत्र जहां *1956* के पूर्व चीन का अधिकार है, वहां चीन का अधिकार स्वीकार कर विवाद का अंत कर लेना चाहिए। इस आधार पर चीन के साथ समझौता कर लेना चाहिए।"

वास्तविक नियंत्रण रेखा

भारत और चीन के बीच सीमा निर्धारित नहीं है। सात दशक बीतने के बाद भी सीमा विवाद सुलझने की दिशा में नहीं हैं, इसके बावजूद दोनों के बीच वास्तविक नियंत्रण रेखा है। भारत और पाकिस्तान के बीच नियंत्रण रेखा (**LOC**) और इसमें फर्क यह है कि यह सुनिश्चित नहीं है। एलओसी *1972* में पाकिस्तान के साथ इंदिरा गांधी और जुल्फीकार अली भुट्टो के मध्य संपन्न समझौते का अंग है। इसे अंतर्राष्ट्रीय मान्यता हासिल है। एलएसी की यह स्थिति नहीं है। तदापि, चीन और भारत में यह समझौता हो गया है कि सीमा विवाद को शांतिपूर्वक सुलझाया जाएगा। कोई भी पक्ष बल प्रयोग नहीं करेगा। सीमा पर गश्ती दलों में टकराव न हो इसके लिए नियम तय किए गए हैं। ऐसा विवाद होने पर परस्पर वार्ता द्वारा समाधान की व्यवस्था है।

वास्तविक नियंत्रण रेखा बहुत हद तक वही है, जहां *7* नवंबर, *1959* को दोनो देश थे। भारत और चीन के बीच सीमा विवाद के चलते *1962* में युद्ध हुआ था। इस युद्ध में चीन जितना आगे बढ़ा था, एक तरफा युद्ध विराम घोषित करके उसने युद्ध द्वारा अर्जित समस्त भूमि स्वयं छोड़ दी,

बल्कि वह उस स्थान से *20* किलोमीटर पीछे चला गया। इस चेतावनी के साथ भारत भी अपनी स्थिति से *20* किलोमीटर पीछे चला जाए और बीच में रिक्त स्थान पर कोई अपनी चौकी नहीं बनाएगा ताकि गश्त के दौरान टकराव नहीं हो। यह युद्ध *20* अक्टूबर, *1962* को प्रारंभ हुआ था। इससे पहले *13* अक्टूबर *1962* को विदेश जाते हुए नेहरू ने चेन्नई हवाई अड्डे पर मीडिया के सम्मुख बयान दिया कि उन्होंने सेना को आदेश दिया है कि वह चीनियों को भारतीय सीमा से निकाल फेंके। भारत-चीन-भूटान सीमा पर स्थित थागला पर्वत शिखर पर कब्जे को लेकर यह बयान था। युद्ध शुरू होने के चार दिन बाद *24* अक्टूबर, *1962* को चीन की सरकार ने युद्ध विराम का प्रस्ताव भारत को भेजते हुए कहा था कि *7* नवंबर, *1959* की स्थिति को वास्तविक नियंत्रण रेखा मानकर दोनों देश सीमित रहें। इस प्रस्ताव के साथ तब भी कहा गया था कि सैनिक मुठभेड़ जैसी किसी अप्रिय संभावना से बचने के लिए दोनों देश इस वास्तविक नियंत्रण रेखा से *20* किलोमीटर पीछे हट जाएं। युद्ध विराम प्रस्ताव में शर्त यह भी थी कि दोनो देश घोषणा करे कि सीमा पर विवाद के समाधान के लिए कोई भी पक्ष बल प्रयोग नहीं करेगा, परस्पर वार्ता और शांतिपूर्ण समाधान का ही सहारा लिया जाएगा।

भारत सरकार ने इस प्रस्ताव का कोई प्रत्युत्तर नहीं दिया, बल्कि *26* अक्टूबर, *1962* को देश में आपातकाल की घोषणा कर दी। यह आपातकाल *1967* तक बरकरार रहा। लोकसभा में *8* नवंबर, *1962* को चीन की भर्त्सना करते हुए उसे आक्रामक कहा गया और घोषणा की गई भारत चीन के साथ युद्ध में है। प्रधानमंत्री नेहरू ने इस प्रस्ताव के समर्थन में कहा, "चीनियों को खदेड़ने और उन पर आक्रमण करने में हम पूरी तरह से न्याय संगत थे।" चीन ने *20* नवंबर, *1962* को एकतरफा युद्ध विराम की घोषणा की। युद्ध के पहले उसकी सेनाएं जिस स्थान पर थी वहीं लौट गई थीं। भारत सरकार ने *7* नवंबर, *1959* की पूर्व स्थिति को वास्तविक नियंत्रण रेखा मानने का प्रस्ताव उस समय औपचारिक रूप में स्वीकार नहीं किया, परंतु सेना को निर्देशित किया गया कि सीमा पर उत्तेजनात्मक कार्रवाई नहीं की जाए।" भारत सरकार की मुख्य आपत्ति थी "चीन द्वारा प्रस्तावित एलएसी सुस्पष्ट नहीं है, बाकायदा नक्शा बनाकर इसे स्पष्ट नहीं किया गया है। अनेक स्थानों पर स्थिति स्पष्ट नहीं है और चीन सैन्य बल का प्रयोग कर उन स्थानों पर स्थिति में परिवर्तन कर सकता है। *7* नवंबर, *1959* की स्थिति नहीं बल्कि *8* सितंबर *1962* की स्थिति को एलएसी के आधार के रूप में लिया जाना चाहिए। इस प्रकार फारवर्ड नीति के तहत भारत ने सीमा पर आगे बढ़कर उन स्थानों पर जहां दोनों देशों की सेनाएं नहीं थीं जो कब्जे किए और चौकियां बनायीं थीं भारत वहां अपना कब्जा चाहता था।

भारत-चीन संबंधों में जमी बर्फ पिघलने की शुरुआत जनता पार्टी के दौरान *1979* में विदेशमंत्री की हैसियत से अटल बिहारी वाजपेयी की चीन यात्रा से मानी जा सकती है। उस समय तक वैश्विक राजनीति में बड़ा परिवर्तन आ चुका था। चीन में माओ के निधन के बाद वहां भी "उदारतावाद" का युग शुरु हो चुका था। पूंजीवाद के पथिक के आरोप में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के महासचिव पद से बर्खास्त किए गए देंग शियाओ पिंग पार्टी की ग्यारहवीं कांग्रेस के तीसरे पूर्ण अधिवेशन में पूरी शक्ति के साथ पुनर्स्थापित और नीति निर्धारक हैसियत में थे। अमेरिका और चीन काफी निकट आ चुके थे और सोवियत संघ और अमेरिका दो अतिमहाशक्तियों में विश्व प्रभुत्व की तीव्र प्रतिद्वंद्वता थी। सीमा विवाद को हल करने के लिए उनका प्रस्ताव था कि मानसरोवर जाने वाले मार्ग पर चीन भारतीय श्रद्धालुओं को यात्रा की अनुमति दे और इस प्रकार सौहार्द के वातावरण में वार्ता के लिए दरवाजे खोले जाएं। लेकिन उसी समय वियतनाम और चीन के मध्य युद्ध प्रारंभ हो गया, सीमा विवाद को सुलझाने के लिए यह अवसर नहीं था।

चीन के साथ संबंधों के सुधार और सीमा विवाद को सुलझाने की दिशा में दूसरी पहल दिसंबर *1988* में राजीव गांधी की चीन यात्रा के दौरान हुई। पूर्व प्रधानमंत्री एवं विदेश नीति विशेषज्ञ इंद्र कुमार गुजराल के शब्दो में "हमारे सामने एक नयी परिस्थिति थी। *1987* के आते-आते हमें निश्चित जानकारी हो गयी थी कि परमाणु हथियारों की तकनोलॉजी पाकिस्तान को हस्तांतरित हो चुकी है। उन दिनों राजीव गांधी प्रधानमंत्री थे। जनरल जिया उल हक अफगानिस्तान में अमेरिकी हस्तक्षेप को दो शर्तों पर स्थान देने के लिए तैयार थे। पहला, अमेरिका पाकिस्तान में जनतंत्रीकरण की मांग नहीं करेगा। दूसरा, वह पाकिस्तान के परमाणु कार्यक्रम में हस्तक्षेप नहीं करेगा।" राजीव गांधी की चीन यात्रा के दौरान दोनों देशों ने सीमा पर अपने दावों पर कायम रहते हुए मान लिया कि सीमा विवादास्पद है और वार्ता के माध्यम से ही समाधान निकालना जाएगा। इसके लिए दोनों पक्ष के प्रतिनिधियों का संयुक्त कार्यदल गठित किया जाएगा और यह *2* से *3* वर्ष के भीतर रिपोर्ट व अपनी आख्या देगा। *1962* से *25* बरस बीतने के बाद, सीमा विवाद के समाधान और वास्तविक नियंत्रण रेखा सुनिश्चित करने की दिशा में यह पहला कदम था। अटल बिहारी वाजपेयी ने उस समय राजीव गांधी के प्रयास का समर्थन करते हुए कहा, "इस संबंध में स्थिति इतनी स्पष्ट और जांची-परखी है कि कार्यदल के नाम पर *2-3* वर्ष व्यतीत करना समय की बरबादी है।" भूलों को भुलाने के स्थान पर उन्हें सुधारने की जरूरत बताते हुए वाजपेयी की सलाह थी "प्रधानमंत्री राजीव गांधी को यह स्वीकारने में झिझक नहीं होनी चाहिए कि भारत ने *1962* में पूर्वोत्तर सीमाओं पर फारवर्ड नीति के तहत अग्रिम चौकियां कायम करने की जो नीति अपनायी थी वह सुविचारित नहीं थी।. . उनके नाना तात्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने विदेश जाते समय चीनियों को थागला रिज से निकालने का जो आदेश दिया था उसके कारण पहले से गंभीर

परिस्थिति और अधिक बिगड़ गई।" (दिनमान *15* जनवरी, *1989*) समाजवादी नेता मधु लिमये ने भी चीन के साथ संबंध सामान्यीकरण के लिए राजीव गांधी के प्रयास का समर्थन करते हुए लोहिया के अनुयायी अपने समाजवादी साथियों को परामर्श दिया था कि राजीव गांधी की आलोचना के लिए यह समय उपयुक्त नहीं है।"

चीन के प्रधानमंत्री लि पेंग *1991* में भारत आए, उस समय नरसिम्हा राव प्रधान मंत्री थे। वास्तविक नियंत्रण रेखा को लेकर दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों में बात अवश्य हुई परंतु वास्तविक नियंत्रण रेखा पर औपचारिक सहमति *1993* में नरसिम्हाराव की चीन यात्रा के दौरान हुई। समझौते पर दोनों देशों ने हस्ताक्षर किए। उसके अनुसार एलएसी *1959* या *1962* की पूर्व स्थिति को आधार मानकर नहीं है, बल्कि दोनों देशों के बीच *1993* को हुए समझौते पर आधारित है। एलएसी में कुछ क्षेत्र हैं, जिनकी स्थिति को लेकर मतभेद थे। सहमति यह बनी थी कि संयुक्त कार्यदल का गठन किया जाएगा जो इन क्षेत्रों की स्थिति स्पष्ट करेगा। उसके बाद से वास्तविक नियंत्रण रेखा को सुनिश्चित करने की दिशा में उल्लेखनीय प्रगति नहीं हुई हालांकि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी पांच बार चीन यात्रा कर चुके हैं।

समस्या और समाधान

चीन के साथ सीमा विवाद इतना जटिल नहीं था कि समाधान करने में सात दशक लग जाएं। समस्या विवादित सीमा से अधिक अंतर्राष्ट्रीय कूटनीति की है। नेहरू की फारवर्ड नीति हिमालयी ब्लंडर थी। इस भूल की जड़ में यह सोच थी कि विदेशी शक्तियों के समर्थन से चीन को विवश किया जा सकता था।

आज का चीन *1949* वाला क्रांतिकारी वाला चीन नहीं है। आज वह प्रभुत्ववादी महाशक्ति बनने के लिए अमेरिका से प्रतियोगिता कर रहा है। भारत को घेरने का उसका मकसद भारत पर आक्रमण या क्षेत्रीय भू विस्तार नहीं, बल्कि पाकिस्तान, अफगानिस्तान, म्यांमार, श्रीलंका, हिंद-प्रशांत में वर्चस्व और हिंद महासागर में पैठ करना है। वह अमेरिका से टक्कर लेने के लिए आधुनिकतम सैन्य शक्ति से लैस हो रहा है। नरेंद्र मोदी भूल कर रहे हैं कि चीन का मुकाबला करने के लिए अमेरिका, आस्ट्रेलिया, जापान के साथ गठजोड़ की नीति पर भरोसा कर रहे हैं। यह उसी प्रकार की भूल है जैसी नेहरू ने अमेरिका, ब्रिटेन, रूस (सोवियत संघ) आदि पर भरोसा करके की थी। सेना अधिकारियों द्वारा भू-परिस्थितियों तथा सैन्य तैयारियों का हवाला देकर फारवर्ड नीति पर एतराज किया गया था। नेहरू ने उनके एतराज को यह कहकर नज़रंजदाज कर दिया कि "वे आश्वस्त हैं कि चीन प्रत्याक्रमण नहीं करेगा"। नेहरू मुगालते में थे कि पश्चिमी देश और सोवियत संघ दोनों के समर्थन के कारण चीन के मुकाबले कूटनीतक रूप से भारत बेहतर स्थिति में हैं। नेहरू को अमेरिका के राष्ट्रपति जॉन एफ कैनेडी ने आश्वस्त किया था, "हम चाहते हैं लड़ाई में भारत की जीत हो। यदि चीन जीतता है तो आर्थिक संतुलन डगमगा जाएगा। यह हमारे हित के प्रतिकूल होगा। जहां तक सोवियत संघ का सवाल था उसने यह कहकर आश्वस्त कर दिया था कि "चीन अगर बिरादर है तो भारत दोस्त"। मतलब सोवियत संघ भारत का विरुद्ध चीन का साथ नहीं देगा। दरअसल, चीन और सोवियत संघ के मतभेद खुल कर सामने आ चुके थे। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद पूंजीवादी शिविर और समाजवादी शिविर के बीच तनाव शैथिल्य की शुरुआत हो गई थी। अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन में दोनों देशों की कम्युनिस्ट पार्टियों ने एक दूसरे के खिलाफ मतभेदों को जाहिर करते हुए एक दूसरे पर तीव्र विचारधारात्मक हमला कर दिया था। बाद में चीन की पार्टी ने सोवियत संघ के नेता निकिता खुश्चेव को संशोधनवादी करार दिया। सोवियत संघ ने भारत चीन तनाव में मध्यस्थता की कोशिश की और गांधीवादी सुंदरलाल के जरिए नेहरू को इसके लिए प्रस्ताव भी भेजा, परंतु चीन सोवियत संघ की मध्यस्थता कबूल करने को तैयार नहीं था। नेहरू समझते थे कि इन अंतर्राष्ट्रीय स्थितियों में फारवर्ड नीति को सख्ती से लागू करने लिए उपयुक्त अवसर है। दूसरी तरफ, चीन अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में वियतनाम, कोरिया, क्यूबा के अमेरिका के साथ तनाव पर नजर गढ़ाए था। क्यूबा पर अमेरिका द्वारा मिसाइल तैनात किए जाने और तीसरे विश्वयुद्घ जैसा वातावरण उत्पन्न हुआ , इस परिस्थिति में अमेरिका तुरंत भारत की सहायता के लिए नहीं आ सकेगा यह आंकलन चीन का था। इसी समय, थागला रिज पर कब्जे के लिए भारतीय सेना के प्रयास के विरोध के साथ चीन ने गलवान घाटी, मतलब पश्चमोत्तर से पूर्वोत्तर तक भारत की सेनाओं को पीछे हटाना और फारवर्ड नीति के तहत भारत द्वारा कायम चौकियों पर कब्जा करना प्रारंभ कर दिया। नेहरू नही समझ पाए थे कि तीन दशक के भीषण ग ह युद्ध, जापान और फिर अमेरिका से सशस्त्र युद्घ करके चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने सत्ता हासिल की है और वह कोरिया और वियतनाम के साथ मिलकर अमेरिका से जूझ रहा था।

आज पचास साल बीत चुके हैं। आज का भारत और आज का चीन दोनों *1962* वाले नहीं हैं। विश्व राजनीतिक परिद श्य काफी बदल चुका है। अमेरिका आज भी अतिमहाशक्ति है परंतु वह अपने प्रभुत्व का विस्तार और नए उपनिवेश बनाने की जगह अपने प्रभुत्व को बरकरार रखने के लिए लगा हुआ है। अफगानिस्तान से अमेरिकी सैन्य वापसी के बाद चीन दक्षिण एशिया में और हिंद-प्रशांत में अमेरिका की जगह लेने के लिए अग्रसर है। इसके खिलाफ भारत-जापान-आस्ट्रेलिया-अमेरिका की व्यूहबंदी करने की रणनीति चल रही है। मुख्य टकराव अमेरिका और चीन में है। भारत का हित चीन-अमेरिका के बीच चल रही प्रभुत्व की प्रतियोगिता की अंध गली में फंसना नहीं है। चीन की मंशाओं और अमेरिका के मोहरे के रूप में इस्तेमाल, इन दोनों से भारत को बचना होगा। ध्यान रहे, अमेरिका ह्रासमान

महाशक्ति है, उसने कहा है कि वह अब अपनी थल सेना को अन्यत्र नहीं भेजेगा। वैसे भी, अमेरिका ने कभी अपनी भूमि पर कोंइ जंग नहीं लड़ी है। भारत की भूमि और भारतीयों सैन्य बल के जरिए प्रभुत्व की अमेरिकी प्रतियोगिता का अंग बनाए जाने की दुर्भिलाषाओं से बचना होगा। इसके लिए जरूरी है, भारत अपने पड़ोसी देशों के साथ मैत्री और विश्वास के संबंध कायम करे। चीन भारत के पड़ोसी, अफगानिस्तान, पाकिस्तान, बंग्लादेश, म्यामार, श्री लंका, मालदीव चारों ओर से भारत को घेरकर प्रशांत और हिंद महासागर में अपना दबदबा कायम करना चाहता है। कच्चे तेल के आयात के सवाल पर भारत अमेरिका के दबाव में भारत आ गया। इससे इरान के साथ संबंधों में दरार आई।

वर्तमान परिस्थिति में लाजिम है कि चीन के प्रभुत्व के खिलाफ संबंधित देश वियतनाम, इंडोनेशिया, बर्मा, मलेशिया, म्यांमार, अफगानिस्तान, बंगलादेश, पाकिस्तान, श्री लंका, मालदीव हर जगह आम जनता, जो अपने-अपने देशों में शासक वर्ग की तानाशाही के खिलाफ संघर्ष कर रही है, भारत उनके साथ समन्वय स्थापित करे। आज का युग विकासवाद का युग है, यह कथन भ्रामक है, यह पूंजीवादी शासक वर्गों की नीति हो सकती है। वैश्विक अर्थ व्यवस्था का संकट, यूरोप अमेरिका सहित विभिन्न देशों में नस्लवादी, फासीवादी शक्तियों का उभार, लोकतंत्र, उदारवाद और नवउदारवाद को धक्के, इनके खिलाफ अमेरिका सहित दुनिया भर में जनता के जुझारू आंदोलन युग की दूसरी प्रव ति को जाहिर करते हैं। यह युग है जिसमें विश्व पूंजीवाद-साम्राज्यवादी व्यवस्था संकटों से घिरी है और जनता क्रांति चाहती है। चीन के साथ युद्ध के नाम पर अमेरिका के फंदे में फंसने का हश्र देश में फासीवादी तानाशाही को पनपाना होगा। साम्राज्यवादी लूट से देश को मुक्त करके ही लोकतंत्र की रक्षा, सच्चा जनवाद तथा आत्मनिर्भरता हासिल की जा सकती है। किसी भी देश, जिसका मंसूबा भारत विरोधी है उसे मुंहतोड़ जवाब दिया जा सकता है। साम्राज्यवाद की गोद में बैठ कर यह लड़ाई नहीं जीती जा सकती।

कोविड 19 लाकडाउन के दौरान मनरेगा काम तथा राशन दिलाने के लिए संघर्ष

23 मार्च *2020* को आयोजित भगत सिंह शहादत दिवस के अवसर पर आकर जब सी.ओ., एसडीएम समेत पांच गाड़ी फोर्स ने सभा स्थल महामारी फैलने, धारा *144* की धमकी दी, तभी से राशन और रोजगार के सवालों पर गांव में संघर्ष का माहोल तैयार होने लगा था।

मनरेगा पर संघर्ष :

3 अप्रैल *2020* को हमने मनरेगा के निष्क्रिय जाबकार्डों की कि शिकायत की। *7* अप्रैल *2020* को रोजगार के सवाल पर कमेटी ने जनसभा बुलाई जिसमें गांव प्रधान भी आए व उन्होंने कहा कि जिनका जाबकार्ड एक्टिव है उन्हें जल्द से जल्द मनरेगा में काम दिया जायेगा, निष्क्रिय कार्डधारकों व बिना कार्ड वालों को भी जाबकार्ड बनवाकर काम दिया जायेगा।

20 अप्रैल *2020* से मनरेगा का काम चालू हुआ - *20* लोग काम पर गये। दूसरे दिन *80* लोग गये। तीसरे दिन*150* लोग गये तो रोजगार सेवक ने कहा इतने लोगों को काम नहीं दे पायेंगे। लोगों के काम की जिद पर अड़ने पर उसने सारा काम बन्द करा दिया। हमारी कमेटी फौरन मनरेगा कार्यस्थल पर गयी और सूचना पाकर प्रधान व रोजगार सेवक भी मौके पर पहुंच गये। वहां बैठे लोगों को कहा गया कि सभी को काम दिया जायगा, जाबकार्ड पर हाजिरी चढ़ाई जायगी और नये जाबकार्ड भी बनवाये जाएंगे। इसके लिए *4* दिन का काम बन्द किया गया। फिर *27* अप्रैल को बीडीओ से सभी को काम दिये जाने की बात की गयी और यह कि रोजगार सेवक सप्ताह में एक बार हाजिरी चढ़ाता है। बीडीओ ने कहा के हम सभी को काम नहीं दे सकते और केवल एक्टिव जाबकार्ड धारकों को काम मिलेगा। जब कमेटी ने यह लिखकर मांगा तो अफसर ने सभी को काम देने की मांग मानी।

29 अप्रैल *2020* से पुनः काम शुरू हुआ। *4* मई *2020* तक लगभग *400* लोग काम करने लगातार गये। जब महीना भर काम करने के बाद भी मजदूरों को पेमेंट नहीं मिला तो मजदूर रोजगार सेवक को घेरने लगे। तब जाकर रोजगार सेवक ने कुछ लोगों का, कुछ को आधा, कुछ को पूरा, कुछ लोगों को एडवांस और कुछ ऐसे लोगों को पेमेंट किया जो काम करने एक भी दिन नहीं गये थे और कहा कि जब तक सबका पेमेंट फाइनल नहीं हो जाता काम बन्द रहेगा।

27 मई *2020* को काम व पेमेन्ट रोकने पर बीडीओ से बात हुई तो उन्होंने कहा कि पेमेंट रूकने में रोजगार की रिपोर्टिंग में लापरवाही हुई होगी। पेमेंट पहले *7* दिन में होना चाहिए। इस वार्ता के बाद *6* दिन काम चला और फिर रोजगार सेवक ने काम बंद करा दिया।

इस सारे अभियान के दौरान गांव के दलाल सक्रीय रूप से दुष्प्रचार करते रहे कि संगठन की मीटिंगों में जाओगे तो मनरेगा का काम बन्द हो जायेगा, पेमेन्ट नहीं होगा और यह संगठन के लोग पैसा वसूलने के लिए मीटिंगें करते हैं, व उदाहरण के तौर बालू के काम के बंद होने, ग्लास फैक्ट्री बंद होने की बात कहते रहे।

6 जुलाई 2020 से लेकर 10 दिन के अन्तर्गत में पेमेन्ट और काम चालू करने के सम्बन्ध में 3 मीटिंगें बुलाईं गयी, जिनका पेमेन्ट नहीं हुआ था, लिस्ट बनाकर 7 जुलाई को बीडीओ के सामने बात रखी। बीडीओ ने पेमेन्ट पूरा करने और काम प्रारम्भ करने का आश्वासन दिया पर बरसात तेज़ होने और रोपाई शुरू होने से मनरेगा में काम के लिए संघर्ष का क्रम मंदा हो गया और काम तब से बन्द है।

इस दौर में कुल 22 मार्च से जोड़ें तो 10 जुलाई तक कुल 110 दिन बीते हैं, जब लॉकडाउन का प्रभाव रहा है। इस दौरान सरकार ने सबको मनरेगा में काम देने की बात कही है। बीकर गांव में, जहां किसान मजदूर सभा की कमेटी है और सक्रिय है, वहां का आंकड़ा यह है कि कुल काम में इतने दिनों में 549 मजदूरों को काम का पेमेंट मिला है। जो काम चल रहा था उसकी हमारी कमेटी अपने रिकार्ड के लिए, रोजगार सेवक के अतिरिक्त हाजिरी भर रही थी। उसमें कुल काम करने वालों के नाम 417 हैं। इनमें से भी कई लोग ऐसे हैं, जिनको दूसरे के जाब कार्ड पर चढ़ाकर काम दिया गया है और उसी के नाम से उसे पेमेन्ट किया गया है। ये लगभग 60 से 70 लोग हैं, यानी कार्डधारक काम करने वाले केवल 350 थे। इससे स्पष्ट हो जाता है कि कुल 549 मनरेगा में पेमेन्ट उठाने वालों में करीब 200 नाम फर्जी हैं।

अब देखें कि इस दौरान काम कितना हुआ और कितना पेमेन्ट हुआ। इस दौरान कुल कार्य दिवस 15,153 हैं। अगर इन्हें कुल 549 मजूदरों पर जोड़ें तो यह औसत प्रति मजदूर 27.6 दिन काम बैठता है और यदि इसमें से फर्जी काम निकाल दिया जाए, जो लिस्ट के हिसाब से मूल्यांकन बाकी है, तब असली काम की जानकारी मिल पाएगी।

राशन पर संघर्ष :

25 मार्च को जब 60 लोगों की लिस्ट घूरपुर थानाध्यक्ष के पास पहुंचाई तो राशन नहीं भेजा गया। जब लगातार लोगों की मीटिगों का सिलसिला शुरू हुआ तब थानाध्यक्ष ने राशन भेजने का आश्वासन दिया। 29 मार्च 2020 को लगभग 5 किलो चावल की खिचड़ी और पांच पैकेट सूखा राशन, जिसका वजन लगभग 3-4 किलो था, भेजा। जाहिर था कि लोग इससे और गुस्से में आ गए।

30 मार्च 2020 को कमेटी ने लोगों से चन्दे के रूप में लगभग डेढ़ कुन्तन चावल इकट्ठा करके तीन दिन लगातार खिचड़ी बनवाकर गांव में वितरित की। जब समझ में आया कि खिचड़ी बनवाने से काम नहीं चलेगा, लॉकडाउन लम्बा चलेगा, तब इन सवालों पर सरकार को घेरने की योजना बनाई। एसडीएम को व्हाट्स ऐप के माध्यम सूची भजी गयी और 15 अप्रैल को उन्होंने लगभग 14-15 किलो वजन का 52 सूखा पैकेट कोटेदार के माध्यम से भेजे। पैकेट वितरण में कुछ गरीब छूट गये जिसका लाभ सम्पन्न लोगों ने उठा लिया।

नये राशन कार्ड बनाने की मांग की गई तो सम्बन्धित दस्तावेज जमा कराने के बाद, लगभग 150 लोगों के आवेदन में लगभग 20 गरीब परिवारों को छोड़कर सभी का निःशुल्क राशन कार्ड बन गया। इस सवाल पर सप्लाई इंस्पेक्टर का कहना था कि सरकार द्वारा निर्देश है कि 79 फीसदी से ज्यादा राशन कार्ड नहीं बनने चाहिए, क्योंकि 21 फीसदी आपात्र श्रेणी में आते हैं। इसके बावजूद हमने 90 फीसदी लोगों के कार्ड बनवा दिये हैं। कमेटी ने उनसे पुछा कि जो गरीब परिवार छूटे हैं यह कौन श्रेणी में आते हैं ? यदि इन गरीब परिवारों से कोई भूख से मरा तो यह जिम्मेदारी आपकी होगी। इसके बाद उसने कहा जितने भी गरीब परिवार राशन कार्ड से वंचित हैं उनका दस्तावेज और अपात्रों की लिस्ट दीजिए। हम अपात्रों को निकालकर पात्रों का कार्ड बना देंगे। यह काम अभी तक हमने पूरा नहीं किया है, क्योंकि गांव में अपात्रों की सूची देने में लोगों को संकोच है।

जैसे ही नये सैकड़ों लोगों का राशन कार्ड बना वह राशन लेने के लिए कोटेदार के पास पहुंच गये तो कोटेदार ने बताया कि राशन कार्ड बनने के तीसरे माह से राशन मिलेगा। नये कार्ड धारकों का तीन माह तक राशन नहीं आता हमारे पास पुराने कार्ड धारकों का ही आवंटन मिला है हम नये कार्ड धारकों को राशन नहीं दे सकते। नये कार्ड धारकों द्वारा एसडीएम से बात करने के बाद ही कोटेदार ने सभी को राशन देना शुरू किया पर राशन पूरा नहीं पड़ा और सैकड़ों लोगों को राशन नहीं मिला। इस पर सप्लाई इंस्पेक्टर ने बताया कि नियम यह है कि नया राशन कार्ड बनने के तीन माह बाद ही राशन का आवंटन होता है।

हमारी कमेटी राशन के सवाल पर 2018-2019 में भी मजबूती से लड़ी थी उस लड़ाई से जनता को एक बड़े हद तक लाभ हुआ था जैसे सभी का राशन कार्ड बन गया था, सभी लोग नियमित रूप से राशन पाने लगे थे तो उस टाइम भी नये पुराने राशन कार्ड धारकों के राशन वितरण में समस्या आयी थी। सप्लाई इंस्पेक्टर से पूछा गया तो उसने बताया था कि जब नया राशन कार्ड बनता है तो उसके तीसरे माह से आवंटन होता है और जब राशन कार्ड कट जाता है तो उसके तीन माह तक राशन मिलता है।

मगर आज ऑनलाइन सिस्टम होने की वजह से नया राशन कार्ड बनने के तीन माह बाद राशन दिया जाता है और राशन कार्ड कटने पर राशन मिलना तुरन्त बन्द हो जाता है। यह सरकार की बड़ी चोरी है।

लॉकडाउन में सरकार ने यह घोषणा की थी कि महामारी के दौरान सभी परिवार को राशन दिया जायेगा चाहे राशन कार्ड बना हो चाहे न बना हो। सरकार की यह घोषणा झूठी व गलत साबित हुई है।

यह वहां की बात है जहां संगठन है और लोग संघर्षरत भी हैं। यहां जब लगभग 10 फीसदी लोग राशन से वंचित हैं तो अन्य गांवों का क्या हाल होगा?

किसान संगठनों द्वारा देशव्यापी विरोध प्रदर्शन

9 अगस्त, 2020 को देश भर के किसानों ने अखिल भारतीय किसान संघर्ष समन्वय समिति के नेत त्व में खेती के बढ़ रहे संकट, लॉकडाउन की परिस्थिति से उत्पन्न प्रवासी मजदूरों, भूमिहीन व गरीब किसानों के सामने उत्पन्न भूख व बोरोजगारी की खड़ी हो रही समस्या और सरकार द्वारा खेती में विदेशी व देशी कारपोरेट के हस्तक्षेप को बढ़ाने के लिए पारित किये गये 3 अध्यादेशों के खिलाफ देशव्यापी विरोध की अपील की थी। इस अवसर पर लगभग पूरे देश में विभिन्न संगठनों ने छोटे व बड़े प्रदर्शन कर अपना विरोध सरकार के सामने प्रस्तुत किया और एआईकेएससीसी की मांगों के तहत एक ज्ञापन प्रधानमंत्री को उनके कार्यालय पर प्राप्त कराया। एआईकेएमएस ने भी इस विरोध कार्यक्रम के लिए जो अपील जारी की थी, जो नीचे प्रस्तुत है।

भूख, बेरोजगारी, महंगाई के विरुद्ध व्यापक संघर्ष खड़ा करो।

लॉकडाउन का विरोध करो।

आरएसएस-भाजपा सरकार के कारपोरेट परस्त, विदेशी कम्पनी परस्त, जमींदार परस्त परिवर्तनों का विरोध करो।

दोस्तों,

120 से ज्यादा दिन गुजर चुके हैं और सरकारें किसी न किसी रूप में लॉकडाउन थोपती जा रही हैं, छोटे आर्थिक कामों पर, किसानों, औद्योगिक मजदूरों, व्यापारियों के काम पर बड़ी रुकावटें लगा रही हैं और छोटे उत्पादन, वितरण व बाजार में बड़ी पूंजी के हस्तपक्षेप तथा नियंत्रण को बढ़ाने के लिए खुली छूट दे रही हैं।

जहां एक ओर, लोगों को तुच्छ व गढ़े हुए आरोपों पर, यहां तक कि घरों से बाहर निकलने पर भी, जुर्माना लगाया जा रहा है, केस लिखे व जेल भेजा जा रहा है, विदेशी कम्पनियों को खेती में लागत के सामान की आपर्ति करने, फसल खरीदने, फसलें तय करने, खाद्यान्न प्रसंस्करण, आपूर्ति व फुटकर व्यापार करने तथा जमाखोरी व कालाबाजारी करने की छूट दी जा रही है। उन्हें जमीन, प्राकृतिक संसाधन तथा अधिरचना तैयार करके दी जा रही है। बैंक, बीमा, एलआईसी का निजीकरण किया जा रहा है; और प्रधानमंत्री को कारपोरेट व विदेशी कम्पनियों की इस लूट में हरी शाखाएं फूटती नजर आ रही हैं!

यह लॉकडाउन आरएसएस/ भाजपा की एक योजना है, कोरोना को रोकने के लिए नही, बल्कि किसानों, मैनुफैक्चरिंग उद्यमियों, सामान्य व्यापारी, शिक्षा तथा स्वास्थ्य को संकटग्रस्त करने की, ताकि कारपोरेट मुनाफा बढ़ सके। वे लॉकडाउन का इस्तेमाल कर सीएए के विरुद्ध लड़ने वालों को फर्जी केसों में पाबंद कर रहे हैं और संविधान का उल्लंघन कर, राज्य सरकारों के अधिकारों पर केन्द्रीय नियंत्रण बढ़ा रहे हैं।

इस लॉकडाउन में हमने दुनिया की किसी भी निर्वाचित सरकार के निर्णय से पैदा की गयी सबसे बड़ी त्रासदी तब देखी जब करोड़ों प्रवासी मजदूरों का लॉकडाउन कर दिया गया, उन्हें भूखा रहने और हजारों किलोमीटर पैदल चलकर घर लौटने को मजबूर किया गया। सरकार ने ना तो कोरोना की हिदायतों का पालन करना सिखाया ना ही उसकी सुविधाएं दीं। उसने लोगों को खाना देने, मनरेगा में काम देने और इलाज करने का दिखावा किया और इसका बढ़-चढ़कर प्रचार किया, जबकि वह उसी समय बड़े निजी निवेशकों के मुनाफे को बढ़ाने के लिए संसाधन व फण्ड हस्तांतरित कर रही थी। आज हमें अपने अधिकारों के लिए एक बड़ा संघर्ष खड़ा करने की जरूरत है।

हमारी मुख्य मांगें हैं: -

1. विरोध सभाओं की इजाजत दो। महामारी कानून, धारा 144 व 188, धारा 353 (सरकारी काम में बाधा), गुण्डा व गैंगस्टर कानून, यूएपीए (आतंकवाद), एनएसए का दुरुपयोग बंद करो। सीएए के विरुद्ध लड़ने वालों पर दर्ज सभी केस वापस लो। हेरफेर से गठित यलगार परिषद केस (भीमा कोरेगांव) में गिरफ्तार सभी लोगों को रिहा करो।

2. कार्ड हो या ना हो, सभी को राशन में प्रति माह, प्रति यूनिट 15 किलो अनाज, एक किलो दाल, चीनी व तेल दो।

3. न्यूनतम मजदूरी दर पर सभी काम मांगने वालों को मनरेगा में, कम से कम 200 दिन काम दो। गांव में गरीबों के विकास के लिए नयी योजनाओं के लिए पैसा दो। हदबंदी से फाजिल, बेनामी व कछारी जमीन के गरीबों को पट्टे दो। वन भूमि से आदिवासियों को उजाड़ना बन्द करो।

4. रबी की फसल का केसीसी कर्ज माफ करो, खरीफ का नया केसीसी तथा पशुपालन के लिए बिना ब्याज का नया कर्ज जारी करो। समूहों के माईक्रोफाइनेन्स कर्जों पर ब्याज माफ करो, वसूली पर रोक लगाओ।

5. डीजल व पेट्रोल के दाम हवाई जहाज के ईंधन के बराबर - 42 रु/लीटर करो।

6. खेती के जून 2020 के - वाणिज्य संवर्धन, मूल्य आश्वासन तथा आवश्यक वस्तु - तीनों अध्यादेश वापस लो। सभी फसलों का सी2 + 50 फीसदी न्यूनतम समर्थन मूल्य अमल करो।

7. बिजली कानून 2020 वापस लो। खेती, छोटी दुकानों व छोटे व्यवसायियों, सूक्ष्म व छोटे उद्यमियों तथा गरीबों के कोरोना अवधि के बिजली के बिल माफ करो।

8. हिदायतों के साथ सभी विद्यालयों को चालू करो। फीस को नियंत्रित तथा उसका भुगतान करो।

9. स्वास्थ्य सेवाओं का राष्ट्रीयकरण करो। सभी को मुफ्त में, एक समान तथा अच्छा इलाज दो।

10. कोरोना मुआवजा : कोरोना संकट चलने तक सभी कामकाजी वयस्क लोगों को 10,000 रुपये प्रति माह का सहयोग दो। सब्जी, फल, मछली व दूध उत्पादकों को मुआवजा दो।

11. सभी रेल यात्री गाड़ी चालू करो, प्रवासी मजदूरों को मुफ्त में आने व जाने की सुरक्षित सुविधा दो।

केन्द्रीय कार्यकारिणी

अखिल भारतीय किसान मजदूर सभा।

रोहतास : सोन व कैमूर की तराई में भूमि संघर्ष

विगत कई वर्षो से भी अविक समय से सोन कैमूर की तराई में छाई खामोशी पिछले समय इस इलाके में हुये कुछ संघर्षो से भंग हो चुकी है। प्रशासनिक तंत्र में हलचल मच गयी है। आतंकवाद तथा उग्रवाद का हौव्वा मचाने के लिए उसके पास कोई नया मसाला नहीं है। उसका सामना "अखिल भारतीय वकसान मजदूर सभा" से है, जो सभी इलाकों में किसानों तथा मजदूरों के मुद्दे उठाता तथा आंदोलन करता रहा है। वैसे सोन कैमूर की तराई में पुलिस-सामंत गठजोड़ का दमन व अत्याचार चरम पर रहा है जिसके बीच अखिल भारतीय किसान मजदूर सभा ने किसानों व मजदूरों को अपने झंडे तले उनकी जायज मांगो को लेकर संगठित करना शुरू किया है। हालत यह है कि इस तराई क्षेत्र में दलित, आदिवासी, अल्पसंख्यक एवं पिछड़ी जातियों के गरीबो के आर्थिक व सामाजिक हालात बद से बदतर है। खासकर धरातल पर न तो नितीश सरकार द्वारा घोषित तीन- तीन डी. जमीन बेघर भूमिहीनों को दी गई और न ही हदबंदी, बेनामी, भूदान, कछार एवं बिहार सरकार की जमीन भूमि सुधार कानून के अंतर्गत भूमिहीनों के बीच वितरित की गयी। न ही आदिवासियों एवं अन्य वनवासियों को वन अधिकार अधिनियम *2006* के अंतर्गत उनके दखल कब्जे की जमीन दी गई न ही वन उत्पादों पर उनका अधिकार स्थापित कराया गया। उल्टे नितीश सरकार के शासन काल में पुलिस सामंत गठजोड़ और वन विभाग के द्वारा दलितों, पिछड़ों एावं आदिवासियों के बेदखली की घटनायें बढ़ी है जिसके चलते इन तबकों में आक्रोश की ज्वाला सुलग रही थी।

गत *27.6.2020* को नौहट्टा थाना के ग्राम नावाडीह खुर्द के आदिवासी दलितों व पिछड़ो द्वारा जोत-कोड़ की जाने वाली करीब *40* एकड़ खेती की जमीन को वन भूमि बताकर वन अधिकारियों का काफिला उक्त भूमि पर व क्षारोपण करने के लिए पूरी तैयारी के साथ आ धमका। कब्जधारी ग्रामीण भूमिहीनों, जिसमें आदिवासी, दलित एवं पिछड़ी जाति समुदाय के लोग शामिल थे, के द्वारा वन विभाग के काफिले को व क्ष लगाने से रोक दिया गया जिसे लेकर दोनों पक्षों में कुछ संघर्ष भी हुआ। इस झडप़ में चंदन कुमार नामक एक किशोर युवक को चोट आयी। किन्तु आक्रोशित ग्रामीणों ने वन विभाग की टीम को भागने पर मजबूर कर दिया।

दूसरी घटना *1-7-2020* को नौहट्टा थाना के ही आदिवासी बहुल गांव चफला में घटी जहाँ उरांव जनजाति के *58* परिवारों नें अपने दखल कब्जे की *60* एकड़ जमीन की रक्षा के लिए प्रतिरोध किया। ग्राम सभा द्वारा भी उक्त *60* एकड़ जमीन को *58* परिवारों के बीच बंदोबस्त करने का प्रस्ताव जिला लोक कल्याणपदाधिकारी को भेज दिया गया है। दरअसल इस क्षेत्र में जंगल राज कायम है। वन विभाग खुले आम वन अधिकार अधिनियम की अवहेलना करता आ रहा है। यह दरअसल बिहार की भाजपा-जदयू सरकार की कथनी व करनी के अंतर को दर्शाता है।

दिनांक *7* जुलाई *2020* को नौहट्टा थाना के ही सोन कैमूर की तराई में स्थित ग्राम भदारा ने ग्रामीण जमींदारों के चंगुल में फंसी *55* एकड़ *47* डी. बिहार सरकार जमीन पर ग्राम भदारा व दारानगर के सैकड़ो भूमिहीनों ने झोंपड़ियाँ बनाकर अपना कब्जा जमाया। इस मौके पर अखिल भारतीय किसान मजदूर सभा के जिला सचिव का. अयोध्या राम एवं संगठन के अन्य नेता का. सुरेन्द्र सिंह, का. रवि ठाकुर, का. इम्त्याज, का. बुधन राम आदि के नेत त्व में करीब *800* की संख्या में इलाकाई जनता भी मौजूद थी। ग्रामीण जमींदारों के बुलाने पर नौहट्टा का थाना अध्यक्ष भारी पुलिस बल के साथ मौके पर पहुंचा लेकिन जनता की संख्या को देखकर संगठन के नेताओं से बातचीत कर चुप चाप चला गया।

गौर तलब है कि खाता नम्बर *319* प्लॉट नम्बर *15, 19, 41* कुल रकबा *55* एकड़ *47* डी. भूमि पर ग्राम भदारा के रामविलास सिंह वगैरह ग्राम के भूमिधारियों द्वारा दावा किया जाता रहा है किन्तु सच यह है कि उक्त भूमि पर उनका कोई कानूनी दावा नही हो सकता। यह भूमि पूरी तरह भूमिहीनों के बीच वितरण के योग्य है। गत तीन वर्षो से संगठन द्वारा इस जमीन के सवाल को अंचलाधिकारी एवं ऊपर के अधिकारियों के सामने उठाया गया। लेकिन जब किसी ने नहीं सुना तो बाध्य होकर भूमिहीनों ने जमीन पर दखल-कब्जा किया। सोन कैमूर की तराई में इस प्रकार की हजारों एकड़ जमीन है जिस पर जमींदारों का अवैध कब्जा है। कहीं- कहीं कुछ जमींदारों ने जाली कागज भी बनवा लिया है। अखिल भारतीय किसान मजदूर सभा ने इस प्रकार की जमीनो को जमींदारों के दखल कब्जे से मुक्त कराने का निर्णय लिया है। *7* जुलाई को भदारा भूमि संघर्ष ने इस क्षेत्र में व्याप्त पुलिस व सामंती आतंक के कोहरे को भेदते हुये भूमिहीन गरीब किसानोंं में उम्मीद की किरण बिखेर दी है।

महिला संगठनों द्वारा 28 अगस्त को विरोध प्रदर्शनों का आह्वान

महिलाएं मांगे जीवन, जीविका और जनवाद

19 और 30 जुलाई को निम्नलिखित महिला संगठनों - अखिल भारतीय जनवादी महिला समिति (एआईडीडब्ल्यूए), नेशनल फेडरेशन ऑफ इंडियन वूमेन (एनएनआईडब्ल्यू), अखिल भारतीय प्रगतिशील महिला समिति (एआईपीडब्ल्यूए), प्रगतिशील महिला संगठन (पीएमएस), अखिल भारतीय महिला सांस्कृतिक संगठन (एआईएमएसएस), अखिल भारतीय अग्रगामी महिला समिति (एआईएएमएस) की एक ऑनलाइन बैठक में देशभर में महिलाओं को भोजन, काम, स्वास्थ्य सेवाओं की मांग और लोकतंत्र की सुरक्षा की मांग उठाते हुए विरोध प्रदर्शनों का फैसला लिया गया। इस बैठक में संगठनों के राष्ट्रीय अध्यक्ष, महासचिव और अन्य पदाधिकारियों ने भाग लिया।

सभी संगठनों के प्रतिनिधियों ने देशभर में महिलाओं के रोजगार और खाद्य सुरक्षा के बारे में गंभीर चिंता व्यक्त की। बढ़ती महामारी और बार-बार लॉकडाउन की स्थिति ने हाशिए पर रह रहे लोगों के जीवन में कहर बरपा रखा है। अधिकांश लोगों विशेषकर महिलाओं की आजीविका छिन गई है और वे भूखमरी के कगार पर हैं। सरकारों ने वादा किया कि मनरेगा के तहत काम उपलब्ध कराया जाएगा लेकिन सच्चाई यह है कि बड़ी संख्या में महिलाओं को कोई काम नहीं मिल रहा है। मुफ्त खाद्यान्न और राशन के अनाज का वितरण एक समान नहीं है ,गरीबों को खाद्यान्न के अधिकार से वंचित कर दिया गया है। सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं के बड़े पैमाने पर निजीकरण ने लोगों को असहाय स्थिति में छोड़ दिया है। स्वास्थ्य प्रणाली केवल कोविड-19 से संबंधित मामलों के देखभाल कर रही है इसके अलावा किसी भी अन्य आपात स्वास्थ्य स्थिति को नहीं देखा जा रहा है। इस कारण गर्भवती व स्तनपान कराने वाली महिलाओं के लिए चिकित्सा देखभाल की तत्काल परिस्थिति में भारी कठिनाई आ रही है। अस्पताल में देखभाल के लिए मना कर दिए जाने के कारण महिलाओं और बच्चों के मरने की घटनाएं सामने आ रही हैं। लॉकडाउन के कारण महिलाओं की स्थिति और कमजोरी हुई है उनकी असुरक्षा बढ़ी है। घरेलू हिंसा के मामलों में बढ़ोत्तरी इसका उदाहरण हैं। स्वयं सहायता समूहों में महिलाओं को एमएफआई एजेंटों द्वारा परेशान किया जा रहा है, उनके साथ दुर्व्यवहार करने की और धमकी देने की घटनाएं सामने आई हैं लेकिन सरकारों ने इन संग्रह एजेंटों के खिलाफ कार्रवाई करने की उनकी अपील को पूरी तरह अनसुना कर दिया है।

लोगों की समस्याओं पर ध्यान देने की बजाय भाजपा सरकार अपने उग्र निजीकरण के कार्पोरेट समर्थक एजेंडे को आगे बढ़ाने में जुटी है। सरकार अभी तक अत्यंत नाकाफी दावों को भी लागू करने में नाकाम है, जैसे खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना, नौकरी के अवसर पैदा करना और प्रवासी मजदूरों, महिलाओं और अन्य श्रमिकों को पूर्ण और आंशिक लॉकडाउन जैसे अनियोजित उपायों से बचने के लिए नकद सहायता प्रदान करना, आदि।

सरकार ने महामारी के कारण लगाए प्रतिबंधों का लाभ उठाते हुए लोकतंत्र और लोकतांत्रिक असहमति पर भी व्यवस्थित ढंग से हमला किया है। झूठे मामले दर्ज किए गए हैं और मोदी सरकार की तानाशाही नीतियों के खिलाफ विरोध प्रदर्शन का नेत त्व करने वाले कार्यकर्ताओं के खिलाफ पुलिस कार्रवाई शुरू की गई है। इस कारण छात्रों, पत्रकारों और अनेक प्रमुख कार्यकर्ताओं को बिना उनके स्वास्थ्य और अन्य सरोकारों की परवाह किए, गिरफ्तार किया गया है। यहां तक कि सरकारी कार्यक्रमों में निर्धारित मानदंडों का पालन किए बिना सहरूग्णता वाले वरिष्ठ नागरिकों को भी गिरफ्तार कर बहुत भीड़-भाड़ वाले कारावास स्थलों में रखा जा रहा है।

बिगड़ती स्थिति के मद्देनजर राष्ट्रीय महिला संगठनों ने संयुक्त रूप से इन मुद्दों को उठाने का निर्णय लिया है। खाद्य सुरक्षा, रोजगार, मुफ्त इलाज के माध्यम से स्वास्थ्य सुविधाओं तक पहुंच, प्रवासी मजदूरों और महिला श्रमिकों को नकद सहायता राशि हस्तांतरण, गहराता कृषि संकट, श्रम कानूनों में श्रमिक विरोधी सुधार, आदि। उन्होंने मोदी सरकार के कट्टरवादी और निरंकुश उपायों के खिलाफ भी निरंतर अभियान चलाने का फैसला किया विशेषकर अल्पसंख्यकों, असंतुष्ट कार्यकर्ताओं और छात्रों को लक्षित करने के संबंध में। बैठक में बढ़ती हिंसा और महामारी के विषय में अंधविश्वास फैलाने संबंधित मुद्दे भी उठाए गए।

राष्ट्रीय महिला संगठनों ने निर्णय लिया है कि हमारे कठोर संघर्षों से हासिल अधिकारों की रक्षा करने के लिए बड़ी संख्या में महिलाओं की लामबंदी करना जरूरी है ताकि भाजपा शासन की जनविरोधी और महामारी से निपटने की अनुपयुक्त और विफल योजना के कारण उत्पन्न भुखमरी, स्वास्थ्य सेवाओं और आर्थिक संकट से जूझ रही महिलाओं की मदद के लिए उपायों को लागू करना सुनिश्चित किया जा सके।

संगठनों ने आबादी के हाशिये के तबकों को प्रभावित करने वाले रोजमर्रा के मुद्दों पर व्यापक संघर्षों के लिए महिलाओं को जुटाने के संबंध में अपनी प्रतिबद्धता दोहराई। राज्य स्तर की महिला संगठनों की संयुक्त बैठकें सभी राज्यों में आने वाले दिनों में की जाएगी। संयुक्त महिला संगठनों ने मजदूरों, किसानों, खेत मजदूरों, छात्रों के सभी संगठनों, जनवादी अधिकार समूहों/आंदोलनों से 28 अगस्त को इस प्रदर्शन में शामिल होने की अपील की है।

अखिल भारतीय जनवादी महिला समिति (एआईडीडब्ल्यूए) - मरियम धवल *9560221371*

नेशनल फेडरेशन ऑफ इंडियन वूमेन (एनएनआईडब्ल्यू) - एनी राजा *9868181992*

अखिल भारतीय प्रगतिशील महिला समिति (एआईपीडब्ल्यूए) - मीना तिवारी *7787858517*

प्रगतिशील महिला संगठन (पीएमएस) - पूनम कौशिक *9811136242*

अखिल भारतीय महिला सांस्कृतिक संगठन (एआईएमएसएस) - छबी मोहंती *943,400,400*

अखिल भारतीय अग्रगामी महिला समिति (एआईएएमएस) - मिताली गुप्ता *9884669964*

भारत की खेती का हृदय, पंजाब के भूमि आन्दोलन में महिलाओं की स्थिति

देश की इस विशाल धरती का अब कुछ हिस्सा हमारा भी है

दूर-दूर तक फैले गेहूँ के खेत दलित महिलाओं के कार्यस्थल हैं। रोजाना वह इनके बीच गड्ढों से बचते हुए अपनी भैंसों के लिए पड़ा हुआ चारा खोजती रहती हैं। वह बड़े खेतों की मेड़ व कोनों में इसे ढूंढ़ती रहती हैं और जहां चारा मिल जाता है, वहां इसे इकट्ठा करके अपने गले पर लटके दुपट्टे में भर लेती हैं। इसके बाद वे जल्दी-जल्दी उस ढेर को अपनी साइकिल के पीछे रखकर, सीट से बांधकर कच्चे रास्ते से घर लौटती हैं।

इन खुले खेतों में रोजाना जाना काफी जोखिम भरा रहता है और वे जल्दी-जल्दी इस खतरे से बचने के लिए अपने काम को निपटाती हैं कि कहीं जमींदार की बुरी नजर उन पर ना पड़ जाए। और अगर नजर पड़ ही जाती है तो वे प्रार्थना करती हैं कि वह दिन उसके लिए अच्छा बीता रहा हो और वह क्रोध में आकर उसे अपशब्द ना कहे और उसे बेइज्जत ना कर दे।

पंजाब भारत का सबसे विकसित खेती का प्रान्त है, जहां हरित क्रांति और खेती का यंत्रीकरण बड़े पैमाने पर सफल रहा है। पर यह सफलता रिस कर प्रान्त के दलित समुदायों तक नहीं पहुँची। भारत में *2015-16* में छपी खेती की गणना के अनुसार पंजाब में *5* लाख हेक्टेअर पर खेती होती है, जिसमें सबसे अधिक संख्या में मौजूद दलित समुदाय के लोग जनसंख्या के *32* फीसदी हैं (राष्ट्रीय औसत *16* फीसदी) जबकि उनके नाम केवल *3.5* फीसदी खेती की जमीन है। प्रदेश के प्रभावशाली समुदाय के लोग यहां के जाट किसान पंजाब और हरियाणा के पूरे क्षेत्र में बड़ी-बड़ी जमीनों के मालिक हैं। ऐतिहासिक रूप से हाशिये पर ढ़केले गये दलितों को जमीन का मालिक नहीं बनने दिया और वे रोजाना कमाने खाने पर निर्भर हैं।

इस भूमिहीनता की परिस्थिति का यह परिणाम है कि दलित महिलाएं, जिनका जीवन सीधे तौर पर जमीन पर काम करने पर निर्भर है, प्रताड़ित व अपमानित की जाती रही हैं। पर *2014* से दलितों के लिए जमीन की दावेदारी करने का एक आन्दोलन, जिसकी नेता दलित महिलाएं हैं, ने पूरे पंजाब में अपना सिर उठाया है।

आन्दोलन की नेता महिलाएं हैं।

गांव के ज्यादातर दलित पुरुष निर्माण उद्योग में काम करने के लिए रोज चले जाते हैं या आसपास के शहरों में वे छोटे धंधे करते हैं और वे जाति निर्धारित काम नहीं करते। खेतों से चारा लाना, कटाई करना और घरेलू काम करना महिलाओं की जिम्मेदारी है। इस कारण से वे नियमित रूप से ऊँची जाति के लोगों के सीधे सम्पर्क में आती हैं। जमीन प्राप्ति संघर्ष समिति, जेडपीएससी की युवा कार्यकर्ता परमजीत कौर का कहना है कि "ऊँची जाति के पुरुषों के निचली जाति की महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार के अनुभव सुनाते हुए आंसू निकल आते हैं। चारा लाने जाने के समय अपमानित किया जाना कोई अप्रत्याशित मसला नहीं है, यह रोज की घटना है"।

जेडपीएससी ने जमीन पर दावे के संघर्ष में दलितों को गोलबंद करने में प्रधान भूमिका निभाई है। उसने आरटीआई के माध्यम से पता किया कि पंजाब के *15* जिलों में ऐसी नजूल भूमि हैं, और संगरूर जिले के *123* गावों में ऐसी जमीने हैं, जो विभाजन से पहले मुस्लिम पंजाबी परिवारों के पास थीं और बंटवारे में छोड़कर गये इन परिवारों की ये जमीनें नजूल भूमि (हस्तांतरण) नियम *1956* के अनुसार ये दलितों को अबवंटित की जा सकती हैं। पर दलितों को इस बात की जानकारी ही नहीं थी।

नजूल भूमि के अतिरिक्त गांव की सामान्य जमीनों में, पंजाब के *1961* के कानून के अनुसार पंचायती भूमि का एक तिहाई हिस्सा दलितों के लिए आवश्यक है और नीलामी के माध्यम से हर साल उन्हे यह पट्टे पर मिलनी चाहिए। इन जमीनों पर दावेदारी पंजाब के इस आन्दोलन के केन्द्र में है। इन जमींनों पर दलित प्रत्याशियों को कठपुतली की तरह खड़ा करके ऊँची जाति के किसान और जमींदार इन जमीनों पर खेती करते रहे हैं। इस साजिश में मुख्य रूप से पुलिस अधिकारी व जमींदार संलिप्त हैं।

जेडपीएससी ने किसान संगठनों के साथ मिलकर कई गांवों में जमीन पर दलितों के उपरोक्त अधिकार की जानकारी साझा की। *2014* में पहला अभियान इस बात का छेड़ा कि जमींदार इन जमीनों को दलितों को वापस कर दें और *6* साल की इस छोटी अवधि में पंजाब के *57* गावों में दलितों ने इस तरह की *2800* एकड़ जमीन पर कब्जा कर लिया है।

परमजीत के अनुसार "शुरु में लोग इस बात पर हँसते थे कि दलितों को जमीन का मालिक बनाया जा रहा है"। वे इस ऐसे कानून पर भी प्रश्न उठाते थे। इस संघर्ष के पहले गांव बल्लाद कलां में जहां के आर्थिक हालात और चेतना कुछ बेहतर हैं, यह संघर्ष शुरु हुआ। वहां से दूर-दूर तक खबर फैली और सभी को पंचायती भूमि पर एक तिहाई कब्जे की बात सच लगने लगी। बड़ी बात यह है कि इसका नेत त्व महिलाएं कर रही थीं।

पंजाब विश्वविद्यालय के डा. ज्ञानसिंह के अनुसार पंजाब में ग्रामीण महिला मजदूरों से पूछे जाने पर *70* फीसदी महिलाएं कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न की बात पर चुप हो जाती हैं। उन्हें डर है कि उन्हें काम नहीं मिलेगा। इन हालातों में जमीन के कानूनी अधिकार की उम्मीद जगने से महिलाओं को ये समझ में आया कि अगर जमीन अपने पास होगी तो मात्र चारा लेने जाने के लिए उन्हें यौन उत्पीड़न का सामना क्यों करना पड़ेगा। कार्यकर्ता बताते हैं कि यही महिलाएं मंहगाई, स्कूल फीस, आदि सवालों पर संगठित नहीं होती थी और घर व बच्चों के काम के बोझ तथा शराबी पतियों से पिटने की समस्याओं से ग्रसित रहती थीं। पर जमीन का सवाल सामने आते ही ये सारे सवाल पीछे रह गये।

परमजीत के अनुसार पहले वे पुलिस से बहुत डरती थीं, "पर अब उन्हें इसकी कोई चिंता नहीं है। उन पर बहुत से केस लिखे गये हैं, पर अपने बच्चों को साथ लेकर वे दिन-रात विरोध सभाओं में भाग लेती हैं। वे अपना काम खत्म करने के बाद

संघर्ष में भाग लेने आती हैं, क्योंकि जमीन प्राप्त करने के लिए उनके मन में गहरा संकल्प है"।

हिंसा का सामना : जमीन की मांग पर संघर्ष बड़ी कीमत चुकाकर खड़ा हुआ है। इस मांग के कारण ऊँची जाति के जमीदारों ने प्रतिक्रिया में बहुत सारे हमले किये हैं। पर दलित लोग इन हमलों के सामने डरे नहीं। उन्होंने किसी ना किसी रूप में अपना विरोध किया है। आन्दोलन की महिला नेता कहती हैं कि जब ऊँची जाति के जमींदार दलितों को काम पर बुलाते हैं तो वे उन्हें पूरी मजदूरी नहीं देते। यहां तक हाल है कि अगर दलित दूध लेने जाता है तो वे उससे पैसे लेने की जगह अपने घर का कुछ काम कराने का प्रयास करते हैं। इससे शोषण का क्रम बना रहता है।

जेडपीएससी अध्यक्ष मुकेश मलौड ने बल्लाद कलां के दलितों के संघर्ष की दस्तान सुनाते हुए बताया कि वहां की *354* एकड़ पंचायती जमीन में से *118* एकड़ पर दलितों का हक बनता था। पर अफसरों व जमींदारों की साजिश ने इसकी नीलामी में दलितों की भागीदारी को रोका हुआ था। जब संघर्ष शुरु हुआ तो पहले पुलिस ने हमला किया और लाठीचार्ज में कई को घायल कर दिया। इस विरोध में मलौड समेत *41* कार्यकर्ता गिरफ्तार किये गये, जो *59* दिन जेल में रहे। डरने की जगह जो दलित बाहर थे उन्होंने लगातार संघर्ष व मोर्चाबंदी जारी रखी और अंत में अफसरों को पीछे हटना पड़ा। उन्होंने समाधान के रूप में एक समझौते की पेशकश की, जिसमें *6* महीने तक दलित खेती करते और *6* माह तक ऊँची जाति के लोग। यह एक छोटी पर महत्वपूर्ण जीत थी, जो भविष्य की संघर्ष की दिशा दिखा रही थी।

जमींदारों व दलितों के बीच बहुत से और गांवों में भी लड़ाईयां हुईं हैं और लगभग *300* जेडपीएससी सदस्यों पर आज भी केस लगे हुए हैं। लड़ाई में लोगों को लाठी, ईंट, फरसा, बल्लम, चाकू, आदि से चोटें आई हैं।

जल्लूर में हुई एक हिंसक घटना में, जब रात को एक रैली चल रही थी, तब इन जमींदारों ने शराब पीकर करीब *100* दलित कार्यकर्ताओं पर हमला बोल दिया और धमकी दी कि "तुम जमीन की मांग कर रहे हो, हम तुम्हारी बेटियों को सबक सिखाएंगे"। उनके घर तहस-नहस किये गये, महिला, बच्चों व पशुओं पर हमला किया गया। इसी हमले में वयोव द्ध संघर्षशील नेता माता गुरुदेव कौर का पैर कुल्हाड़ी से काटा गया जिसका कई दिन के इलाज के बाद उनकी मौत हो गयी।

ऊँची जातियों द्वार बहिष्कार

जमीन वाली ज्यादातर ऊँची जातियों ने इस आन्दोलन का विरोध करते हुए बहिष्कार की घोषणा की है और दलितों के विरुद्ध बंदिशों की घोषणा गांव के गुरुद्वारों के लाउडस्पीकरों से की जाती रहीं हैं। इन बंदिशों में दलितों का दूध ना बेचा जाना, काम ना देना, खेत से सब्जी व चारा ना लेने देना, ट्यूबवेल से पानी ना लेने देना, आदि शामिल हैं। जो ऊँची जाति के लोग इसका उल्लंघन करते थे उसने जुर्माना वसूला जाता था।

टोलेवाल गांव के एक *48* वर्षीय इलेक्ट्रीशियन जगतार सिंह ने बताया कि *2016* में जीवन में पहली बार उन्होंने खेती की, और *2017* में एक फर्जी प्रत्याशी खड़ा करके जमींदारों ने उस जमीन पर अपना दावा ठोक लिया। इसका विरोध करने पर जमींदारों ने उन पर हमला किया, जिनमें उनकी पत्नी व रिश्तेदार घायल हुए। उनका कहना है कि जमींदारों को सबसे बड़ा कष्ट इस बात से है कि अब हम संगठित हो गये हैं और अब हम उनका काम नहीं करेंगे।

हालांकि इन सारी घटनाओं में कुछ एससी/एसटी के केस लिखे गये हैं पर ज्यादातर गिरफ्तारियां दलितों की ही की गयी हैं। इन मामलों में जब हम नए साल की नीलामी में दावेदारी पेश करते हैं तो हम पर दबाव बनाया जाता है कि हम दर्ज कराए गये एससी/एसीटी के केस वापस ले लें और जमींदारों की अनुमति से ही नीलामी में भाग लें। इस सबका विरोध करते हुए ही हम एक तिहाई जमीन का पट्टा ले सके हैं, जिसका *90,000* रुपये किराया जमा करके हम खेती कर रहे हैं।

जमीन पर कब्जे के बाद का जीवन

जहां दलितों ने जमीन पर कब्जा कर लिया है वहां उनका जीवन बदल गया है। बल्लाद कलां में उनकी *11* सदस्यीय कमेटी है, जो बुआई, कटाई और फसल के अतिरिक्त हिस्से की बिक्री कराती है, दलित सामूहिक रूप से खेती करते हैं और मुनाफा तथा खर्च आपस में बांट लेते हैं। हाल में ही उन्होंने एक *3.75* लाख का एक ट्रैक्टर भी खरीद लिया है। शारीरिक परिश्रम से *300* रुपये कमाने या मनरेगा में काम करने की जगह ये दलित पहली बात अपने लिये काम कर रहे हैं। हर परिवार साल में *5* कुन्तल गेहूँ, एक ट्राली भरकर भूसा तथा साल में *10* से *15* हजार रुपये का मुनाफा प्राप्त कर लेता है। इस गांव की परमजीत कौर, जो अवकाश प्राप्त आंगनबाड़ी अध्यापिका हैं, बताती हैं कि अब कुछ बचत हो जाती है, क्योंकि *2014* से पहले की तरह अब अनाज नहीं खरीदना पड़ता। पहले जमींदारों पर निर्भर रहना पड़ता था और उनके गुस्से का शिकार होने पर उधार में पैसा भी नहीं मिल पाता था।

2017 के एक अध्ययन के अनुसार ग्रामीण पंजाब के *68* फीसदी कृषि मजदूर बड़े किसानों से ऊँची ब्याज दरों पर कर्ज लेते हैं। गिरवी रखने लायक सम्पत्ति ना होने के कारण वैसे भी उन्हें बैंकों से कर्ज नहीं मिल सकता है। संघर्ष के क्षेत्र के दलितों का कहना है कि स्थितियां अब बदल गयी हैं। हमारे पास जमीन है और अब हर मुसीबत से लड़ने की हिम्मत भी आ गयी है और हम दूसरे के खेतों पर खेती करने नहीं जाते और हमारी बेटियों और बहुओं को बेइज्जत नहीं किया जाता। वे रात में भी बेहिचक अकेले जा सकती हैं।

जिन गांवों में जमीन का संघर्ष हुआ है वहां इन दलित परिवारों ने दूसरों की मदद भी की है। लॉकडाउन के दौरान उन्होंने कई भूमिहीन परिवारों को अनाज देकर मदद की।

इस संघर्ष ने महिलाओं को राजनीतिक रूप से काफी जागरूक किया है। वे अब जानती हैं कि अधिकारी क्या होते हैं और अपना काम कराने के लिए किस तरह से कागजों को दौड़ाना पड़ता है। वे सरकारी कामकाज की बहुत सारी पेचीदगियों को समझ गयी हैं, जो किताबें पढ़ने से वे कभी भी नहीं सीख पाती। भारो, भाटीवाल कलां, बल्लाढ कलां और कुलर खुर्द में महिलाएं पंचायती पदों के लिए खड़ी भी हुई हैं। उनके अनाज के भंडार भी भरे हैं और पशुपालन की समस्या भी हल हुई है। उनका कहना है कि देश की इस विशाल धरती पर अब कुछ हिस्सा हमारा भी है।

(ब्लूप्रिंट.न्यूज में प्रकाशित लेख का संक्षिप्त अनुवाद)

आम आदमी पार्टी का सीएए विरोधी आंदोलन पर बेहूदा आरोप – उसका महिला विरोधी चरित्र उजागर– आप को महिलाओं से माफी मांगनी चाहिये – महिला संगठन

आम आदमी पार्टी ने बेहूदा आरोप लगाया है कि शाहीनबाग में सीएए विरोधी आंदोलन का कथानक भाजपा ने लिखा था। हमने पहले ही भाजपा द्वारा उस आंदोलन की निंदा देखी है, जिसने उसके खिलाफ सांप्रदायिक और लैंगिकवादी आरोपों की झड़ी लगा दी थी। 'भाजपा द्वारा नियोजित आन्दोलन' के रूप में इसे चित्रित करने का आम आदमी पार्टी का नवीनतम प्रयास 'कायरता में शरण लेने' का एक दयनीय प्रयास है। महिलाओं के आंदोलनों के तौर पर हमारे पास पर्याप्त कारण हैं कि हम आम आदमी पार्टी को एक लैंगिक समानता वाली पार्टी के रूप में नहीं देखें, लेकिन शाहीनबाग आंदोलन को अपमानित करने के उनके इस प्रयास ने उन्हें एक महिला-विरोधी, निम्न-नैतिकता वाली और पित सत्तात्मक व अलोकतांत्रिक पार्टी के रूप में चित्रित किया है।

हम मुखर होकर कहना चाहते हैं कि शाहीनबाग आंदोलन जामिया के आसपास की महिलाओं के आक्रोश का स्वतःस्फूर्त परिणाम था जिन्होंने सुनवाई होने तक धरने पर बैठने के पारम्परिक तरीके को अपनाया। छात्रों पर पुलिस की क्रूरता, सीएए/ एनआरसी/एनपीआर का अन्याय और यह तथ्य कि सरकार किसी भी लोकतांत्रिक आवाजों को सुनने के लिए तैयार नहीं थी, ने क्षेत्र की महिलाओं को खड़ा होने और उनके अधिकारों के लिए लड़ने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने यह सड़क के एक हिस्से पर बैठकर, संविधान का पाठ करके और देश के उस इतिहास, जिसने भारतीयों को भारत दिया, को फिर से याद करके किया।

भाजपा ने हमेशा महिलाओं को दूसरे दर्जे के नागरिकों के रूप में माना है, जिन्हें नियंत्रित करके उनका उपयोग कट्टरता और पित सत्ता को बढ़ावा देने और नफरत को बढ़ावा देने के लिए किया है। भाजपा ने मुस्लिम महिलाओं का, असहाय और दयनीय के रुप में जो चित्रण किया हुआ था उसेश्शाहीनबाग की महिलाओं ने तोड़ दिया। उन्होंने दिखाया कि मुस्लिम महिलाएं पिछड़ी, निरक्षर, दमित, उत्पीड़ित और मुक्ति दिलाये जाने की जरूरतमंद नहीं थीं। ये महिलाएं शिक्षित और जागरूक थीं, अपने अधिकारों को जानती थीं और किसी भी विद्वान की भांति संवाद कर अपने विचार रख सकती थीं। देश के इतिहास में पहली बार था जब किसी आंदोलन में उदारवादी, राजनीतिक विचारक, पारंपरिक नेत त्व व पुरुष अगुवाई नहीं कर रहे थे। समाज के शिक्षित और अशिक्षित दोनों तबकों से महिलाओं को जिस तरह का समर्थन मिला, उससे भाजपा हिल गई थी। शाहीनबाग की महिलाओं के साथ एकजुटता रखने वाले हर व्यक्ति ने किसी न किसी रूप में अभाव का कष्ट झेला था। लेकिन केंद्र में भाजपा के नेत त्व वाली सरकार ने प्रदर्शनकारियों के साथ उनकी जायज मांगों पर चर्चा करने से इनकार कर दिया।

आम आदमी पार्टी सीएए के पारित होने की शुरुआत से ही एक संदिग्ध खेल खेल रही है। किसी भी विदेशी को अनुमति नहीं दी जानी चाहिए क्योंकि उनके लिए कोई नौकरी या संसाधन नहीं थे, के गोल-मोल तर्क से शुरु करते हुए, उन्होंने आगे जाकरश्शहर भर में विरोध प्रदर्शनों को यातायात और अर्थव्यवस्था को नुकसान पहुंचाने वाला कहा। प्रदर्शनों का कारण उनके लिए महत्वहीन था। एक बार भी आम आदमी पार्टी के नेताओं ने शहर भर के छात्रों और प्रदर्शनकारियों से बात करने की जहमत नहीं उठाई। चुनावों के दौरान, आम आदमी पार्टी भाजपा की रणनीति से सहमत होते हुए विरोध प्रदर्शनों को "कानून और व्यवस्था" की समस्या घोषित करने लगी थी। उनका कथन था कि अगर पुलिस हमारे नियंत्रण में होती, तो हम कुछ ही दिनों में विरोध प्रदर्शनों को हटा देते और महीनों तक इसे नहीं चलने देते।

आम आदमी पार्टी का पित सत्तात्मक और महिला विरोधी रवैया यह दर्शाता है कि महिलाओं के नेत त्वाधीन आंदोलनों को यथा स्थितिवाद द्वारा स्वीकार किया जाना मुश्किल है। महिलाएं, जो खड़ी हुईं और पूरे देश में लोकतंत्र के लिए आंदोलनों को प्रेरित किया, वे छुटभैय्ये नेताओं द्वारा लेबल या वर्गीकरण की मोहताज नही हैं। दिल्ली में आम आदमी पार्टी के राजनेताओं को यह समझने की आवश्यकता है कि यदि वे महिलाओं का सम्मान नहीं कर सकते हैं, तो महिलाओं द्वारा भी उनका सम्मान नहीं किया जाएगा। कट्टरता और नफरत के बीज जो वे बो रहे हैं, वे सम द्ध फसल नहीं देंगे। महिलाएं कोई वस्तु नहीं हैं जिनका उपयोग करो और फेंक दो। हमारा अपना दिमाग है और हम अपने गढ़ की सुरक्षा करना जानते हैं। उत्तर पूर्वी दिल्ली में हिंसा इस बात का प्रमाण है कि महिलाओं की फासीवाद, पित सत्ता और भ्रष्टाचार को ललकारने की क्षमता से भाजपा बुरी तरह से हिल गई थी। एक महामारी और नागरिकों के अधिकारों पर पूर्ण पाबंदी के बाद ही पुलिस कई सीएए विरोधी कार्यकर्ताओं के खिलाफ फर्जी मुकदमे दर्ज करके उन्हें जेल में डाल सकी।

हम मांग करते हैं कि आम आदमी पार्टी उन महिलाओं से माफी मांगे, जिन्होंने इतिहास में ज्ञात सबसे शांतिपूर्ण तरीके से और केवल हमारे संवैधानिक रूप से संरक्षित मौलिक अधिकारों को मांगा था। उन्हें एक बिना चेहरे वाले, नासमझ झुंड, जिनका नेत त्व किया जा सकता है/गुमराह किया जा सकता है, के रूप में चित्रित करने का प्रयत्न, उनकी शानदार कल्पना और मुखरता जिसको भारत और विदेशों में सराहा गया था, का अपमान है। यदि आम आदमी पार्टी के पास अन्यायपूर्ण सीएए के खिलाफ खड़ा होने की हिम्मत नहीं है, और वह सोचती है कि समुदायों को अमानवीय या कमजोर या बुद्धिहीन दर्शा कर अपमानित कर सकती है, तो उसे अपने नैतिक दिशा की जांच करने की आवश्यकता है। स्पष्ट रूप से, सत्ता और पद के लिए उनकी वासना उन्हें अवसरवादियों में परिवर्तित कर रही है, जिन्होंने दिल्ली के लोगों द्वारा उन्हें *2019* में सत्ता में पुनः लाने के लिए वोट देकर दिये गये जनादेश को विफल कर दिया है।

(प्रगतिशील महिला संगठन, दिल्ली, नेशनल फेडरेशन ऑफ इंडियन वीमेन, दिल्ली इकाई, सेण्टर फॉर स्ट्रगिलंग विमेन, सहेली तथा स्वास्तिक महिला समिति द्वारा 19 अगस्त को जारी)

सर्वोच्च न्यायालय की अवमानना के लिए वरिष्ठ अधिवक्ता प्रशान्त भूषण पर मुकदमे का विरोध करो

वरिष्ठ अधिवक्ता तथा जनवादी अधिकार कार्यकर्ता प्रशान्त भूषण को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अवमानना के लिए दोष सिद्ध घोषित किया जाना भारतीय राज्य का संविधान प्रदत्त जनवादी अधिकारों के अमल से पीछे हटने का एक और निर्णायक कदम है। यह भारतीय शासक वर्गों द्वारा स्वीकृत किये गये संवैधानिक ढांचे पर उनके समग्र हमले का हिस्सा है।

सर्वोच्च न्यायालय ने जून-जुलाई *2020* में श्री प्रशान्त भूषण द्वारा जारी किये गये दो ट्वीट संदेशों का स्वतः संज्ञान लिया है। इसमें से एक ट्वीट में श्री भूषण ने पिछले *6* सालों के दौरान, यानी आरएसएस-भाजपा शासन काल में लोकतंत्र के विनाश पर और उसमें सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका पर अपनी गहरी चिंता व्यक्त की हैं। इस ट्वीट का उल्लेख सर्वोच्च न्यायालय के आदेश में किया गया है। इसमें कहा है कि "जब भविष्य में इतिहासकार बीते हुए *6* वर्षों का मूल्यांकन करेंगे और देखेंगे कि किस तरह से भारत में औपचारिक आपातकाल घोषित किये बिना भी लोकतंत्र को नष्ट किया गया है, वे खासतौर से इस विनाश में सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका को चिन्हित करेंगे और इससे भी ज्यादा, खासतौर पर चिन्हित करेंगे पिछले *4* मुख्य न्यायाधीशों की भूमिका को"। दूसरा ट्वीट वर्तमान मुख्य न्यायाधीश से और सर्वोच्च न्यायालय के लॉकडाउन से सम्बन्धित था। सर्वोच्च न्यायालय ने इसी समय *2009* में दर्ज किये गये प्रशान्त भूषण और तहलका के प्रकाशक तरुण तेजपाल के खिलाफ अवमानना के एक पुराने केस को भी पुनर्जीवित कर दिया। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा ऐसे समय पर जब वह केवल ऑनलाइन सुनवाई कर रही है, इस केस का लिया जाना दिखाता है कि इन दोनो ट्वीट के कारण ही इस पुराने केस को इस समय सुना जा रहा है। कोर्ट के आदेश से यह बात स्पष्ट है कि वर्तमान लोकतंत्र के विनाश में सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका से सम्बन्धित ट्वीट ने उन्हें आक्रोशित किया है। क्या यह इसलिए नहीं हुआ कि इस मामले का असली सत्य यही है ?

सर्वोच्च न्यायालय की पीठ ने इस केस के आदेश में कहा है कि न्यायपालिका लोकतंत्र का "केन्द्रीय स्तम्भ" है। अब पीठ के अनुसार इन ट्वीटों के कारण इस केन्द्रीय स्तम्भ का अस्तित्व खतरे में पड़ गया है। जैसा कि कुछ टीकाकारों ने कहा है कि इसका अर्थ यही निकलता है कि इस केन्द्रीय स्तम्भ का पहले से ही इतना अपशरण हो चुका था कि अब ये ट्वीट इसको गिराने के लिए काफी है। पीठ ने ये टिप्पणी की है कि "इस बात पर कोई भी संदेह नहीं है कि ये ट्वीट न्यायपालिका की संस्थान में जनता के विश्वास को डगमगा रही हैं"। इस बात से यह प्रश्न उठता है कि ऐसा क्या हो गया कि न्यायपालिका की संस्था इतनी कमजोर हो गयी कि ये ट्वीट उसमें जनता के विश्वास को हिला दे रही हैं! पीठ ने यह भी कहा है कि "सार्वजनिक हित और सार्वजनिक न्याय की यह मांग है कि कानून की द ढ़ भुजाएं भूषण पर, जो धारा को प्रदूषित करके कानून के राज की वरिष्ठता को चुनौती दे रहा है"। ऐसा क्या हो गया है कि न्याय की "धारा" इतनी गंदी हो गयी कि ट्वीट से ही वह बाधित हो जाएगी? हालातों की वर्तमान स्थिति पर सर्वोच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँच गया है, इस हद तक कि इन ट्वीटों से 'राष्ट्रों के बीच भारतीय न्यायपालिका शान की प्रतिष्ठा' कलंकित हो सकती है, इस मूल्यांकन के बाद यह उम्मीद की जा रही थी कि सर्वोच्च न्यायालय की खंडपीठ इस नाजुक हालात के असली कारणों की जांच करने के आदेश करेगी। पर पीठ ने कारणों को ढूंढ़ने की प्रक्रिया अपनाने से इंकार कर दिया। उसकी प्रतिष्ठा तो लोगों के जनवादी अधिकारों और संवैधानिक आदेश की रक्षा में चमकनी चाहिए।

अवमानना का बल मुख्य रूप से न्याय की प्रक्रिया बाधित किये जाने पर आधारित है और स्वीकृत है। इसमें न्यायालय के आदेश का उल्लंघन करने वाले अधिकारियों को सजा देना शामिल है; इसमें उन लोगों के खिलाफ आदेश किया जा सकता है, जो किसी अवैध उद्देश्य अथवा फैसले को प्रभावित करने के लिए न्यायपालिका पर हमला करते हैं। यह ताकत न्यायिक स्वतंत्रता को और मजबूत करने के लिए दी गयी है। इसे कुर्सी के सम्मान के नाम पर किसी भी आलोचना को अपराधिक घोषित करने के लिए नहीं किया जाना चाहिए जैसा कि राजा-रजवाड़े करते थे। श्री भूषण की चिंतायें कि आरएसएस-भाजपा के शासन के तहत लोकतंत्र नष्ट किया जा रहा है और लोगों के संवैधानिक अधिकारों की रक्षा में सर्वोच्च न्यायालय विफल यहा है, बहुत से लोगों की साझा चिंता भी है। लोगों ने निराशा के साथ वो माजरा देखा जब मार्च *2020* में लॉकडाउन की घोषणा के बाद करोड़ो-करोड़ मजदूर धूप और भूख का सामना करते हुए हजारों-हजार किलोमीटर पैदल चल रहे थे और सर्वोच्च न्यायालय अपनी न्यायिक जिम्मेदारियों से पीछे हट गयी। लोगों ने वो रूप भी देखा जिसमें जम्मू-कश्मीर के लोगों के बुनियादी अधिकार एक साल तक से ज्यादा दबाए रखे गये और सर्वोच्च न्यायालय उस पर कदम उठाने में विफल रहा; यहां तक कि बंदीप्रत्यक्षीकरण याचिकाओं को भी सुनने से इंकार कर दिया गया। लोग इस बात से भी निराश हैं कि इन ट्वीटों से सम्बन्धित मामला सुने जाने में कितनी जल्दी की जा रही है, जबकि लोगों के अधिकारों से सम्बन्धित कई नाजुक प्रश्न लंबित पड़े हुए हैं।

जब सर्वोच्च न्यायालय ने जजों की आलोचना के सवाल को विस्तार से सुनने का निर्णय ले लिया है, तो श्री भूषण को सजा देने को फिलहाल टाल दिया जाए और इसे तब तक मुल्तवी कर देना चाहिए जब तक खुली अदालत में इस पूरे सवाल पर चर्चा करके निर्णय ना लिया जाए। श्री प्रशान्त भूषण को दोष सिद्ध किये जाने के खिलाफ संगठित हो और भाग लो। यह हमला जनता के अधिकारों पर आम हमले का हिस्सा है। लोगों को अपने जनवादी अधिकारों की रक्षा के लिए आगे बढ़ना चाहिए। यह संघर्ष फासीवादी हमले के खिलाफ संघर्ष का हिस्सा है।

(भाकपा (माले) न्यू डेमोक्रेसी द्वारा 18 अगस्त, 2020 को जारी वक्तव्य का संक्षिप्त अनुवाद)

Pratirodh Ka Swar, Hindi Organ of CPI(ML)-New Democracy *Website* : cpimlnd.org

*प्रकाशक, मुद्रक व स्वामी यतेन्द्र कुमार द्वारा स्टार ऑफसेट, टी-***2151/8-***ए-2, न्यू पटेल नगर, नई दिल्ली-***110008** *से मुद्रित व बालमुकन्द खण्ड, गिरी नगर, नई दिल्ली-***110019** *से प्रकाशित। सम्पादक : यतेन्द्र कुमार*